नारी
आंदोलन
का इतिहास

भाग २

स्त्री समानता और मताधिकार

विश्व में नारी आंदोलन

स्त्री समानता और मताधिकार: विश्व में नारी आंदोलन

उन्नति
उन्नति

sahiyar

प्रस्तुतिः उन्नति - विकास शिक्षण संगठन एवं सहियर (स्त्री संगठन), २००९

प्रथम संस्करणः ५०० प्रतियां, २००९

इस पुस्तिका का उपयोग, जन-शिक्षण के लिए, गैर-व्यावसायिक रूप से किया जा सकता है। उपयोग करते समय कृपया लेखिका एवं प्रकाशक का उल्लेख करें तथा हमें सूचित करें।

लेखिकाः डॉ. तृप्ति शाह, सहियर (स्त्री संगठन), वड़ोदरा

हिन्दी अनुवादः रामनरेश सोनी

प्रकाशकः उन्नति - विकास शिक्षण संगठन एवं सहियर (स्त्री संगठन)

प्राप्ति स्थानः

उन्नति - विकास शिक्षण संगठन
जी-१/२००, आज़ाद सोसायटी, आंबावाड़ी
अहमदाबाद-३८० ०१५
फोनः ०७९-२६७४६१४५, २६७३३२९६
ई-मेलः sie@unnati.org

सहियर (स्त्री संगठन)
जी-३, शिवांजली फ्लैट्स, जाधव अमीश्रद्धा सोसायटी के पास
नवजीवन, आजवा रोड़, वड़ोदरा-३९० ०१९
फोनः ०२६५-२५१३४८२
ई-मेलः sahiyar@gmail.com

डिज़ाइन एवं कला निर्देशनः तरुण दीप गिरधर, अहमदाबाद

चित्रांकनः कविता अरविंद, चिड़िया उड़ व रणजित बालमूचु, ध लेम्ब स्टूडियो

ले-आउटः रमेश पटेल एवं हितेश गोलकिया

मुद्रकः बंसीधर ऑफसेट, अहमदाबाद. फोनः ०७९-२६४४१९६७

अस्वीकरणः

यह पुस्तिका मुख्य रूप से स्थानीय कार्यकर्ताओं की जेंडर, पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था, स्त्रियों के गिरते स्थान के ऐतिहासिक मूल और समतापूर्ण विकास हेतु महिला सशक्तिकरण की जरूरत से संबंधित अवधारणाओं के संदर्भ में समझ बढ़ाने के आशय से तैयार की गई है।

इस पुस्तिका में वर्णित महिला मंडल की चर्चा में भाग लेने वाले सभी पात्र काल्पनिक हैं और किसी भी जीवित अथवा ऐतिहासिक पात्र के साथ उनकी समानता संयोग मात्र है। (किसी प्रसंग में ऐतिहासिक या वर्तमान ही में घटित घटनाओं के साथ यदि उनके अनुभव जुड़े हुये लगें, तो ऐसा सिर्फ मुद्दों और अवधारणाओं को स्पष्ट करने के उद्देश्य से किया गया है।)

इस पुस्तिका का उपयोग करने वाले व्यक्ति इस साहित्य का उपयोग समुदाय से प्राप्त अपनी ताज़ातरीन जानकारी के साथ जोड़कर तथा अधिकाधिक सूचनाओं की जरूरत पड़े तो विशेषज्ञों से और संदर्भ साहित्य से प्राप्त करके उनके साथ उपयोग कर सकते हैं। न यह कोई कानूनी साहित्य है, न ही इसका व्यावसायिक उद्देश्य से उपयोग किया जाए।
इस पुस्तिका में पृष्ठ नं-२५ पर दिखाये हुए मानचित्र पैमाने के अनुसार नहीं हैं।

प्रस्तावनाः अभिनन्दनीय प्रयास

नारी आंदोलन के इतिहास तथा वर्तमान की चुनौतियों को दर्शाने वाली इस पुस्तिका श्रृंखला का स्वागत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष की अनुभूति हो रही है। इस पुस्तिका के प्रकाशन में विकास-शिक्षण में कार्यरत प्रतिष्ठित संस्था 'उन्नति-विकास शिक्षण संगठन' और 'सहियर' का यह संयुक्त प्रयास प्रशंसनीय है। गुजरात तथा गुजरात के बाहर पीड़ित वर्गों के आंदोलन से जुड़ी सक्रिय कार्यकर्ता तृप्ति शाह को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं हैं, बल्कि एक इनसाइडर के रूप में महिला आंदोलन का आलेखन तृप्ति द्वारा हुआ है, इसका खास उल्लेख करना मुझे जरूरी लगता है।

भारत में नारी आंदोलन के इतिहास के आलेखन, महिला अध्ययन के महत्वपूर्ण अंशों के रूप में हुए हैं। इसके अलावा, नारी समूहों के विभिन्न मुद्दों पर संघर्ष तथा प्रतिक्रिया के आलेखन विविध रूपों में भी उपलब्ध हैं। अध्ययनकर्ताओं ने पश्चिम के नारी आंदोलन की प्रक्रिया की तुलना भारतीय नारी आंदोलन के साथ भी की है। इसके बावजूद मैं यहां प्रस्तुत पुस्तिका श्रृंखला की विशेष उपयुक्तता का संक्षेप में वर्णन करना चाहूंगी।

समाज परिवर्तन के लिए तथा नारी समानता व स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत स्थानीय कार्यकर्ताओं और अध्ययनकर्ताओं के लिए महिलाओं का गिरता स्थान, पितृसत्तात्मक ढांचा और मूल्य तथा इनसे मुक्ति पाने हेतु प्रयासों को समझना अत्यंत आवश्यक है। नारी आंदोलन में केवल शौर्य, उत्साह या शहादत ही पर्याप्त नहीं है। वह केवल किसी मुद्दे पर आधारित चुनौती ही नहीं है, बल्कि वह समग्र पितृसत्तात्मक और सामाजिक-आर्थिक ढांचे को चुनौती देता है। इसके अलावा नारी का दमन-शोषण-अवहेलना किसी एक विशिष्ट घटना या विशिष्ट ढांचे द्वारा नहीं होता, बल्कि यह समाज के मूल में व्याप्त है और सर्वव्यापक है। अतः इस मूल को समझना और चुनौती देना आवश्यक है।

वर्तमान में स्वास्थ्य, पर्यावरण सुरक्षा, मानवाधिकार रक्षा, दलित, पीड़ित वर्गों की समस्याओं आदि जैसे विविध मुद्दों पर स्थापित वर्ग के विरुद्ध अनेक गैर-सरकारी

संस्थाएं प्रयासरत हैं। प्रत्येक स्तर पर संघर्ष और चुनौती अनिवार्य होती है। अपने कार्य में जेंडर आधारित न्याय लाने हेतु यह आवश्यक है कि हर स्तर के कार्यकर्ता को नारी आंदोलन के विविध स्वरूपों, रणनीतियों तथा उनसे जुड़े सही-गलत की जानकारी व समझ हो। मेरा मानना है कि यह पुस्तक श्रृंखला उनके लिए मार्गदर्शक साबित होगी।

किसी भी मुद्दे या घटना के अनुरूप रणनीति तय करने के लिए तात्कालिक समझ आवश्यक है, परंतु स्थानीय कार्यकर्ता जब समाज में बुनियादी परिवर्तन लाने की कोशिश कर रहे हों, तब विभिन्न बारीकियों को समझना उनके लिए अत्यंत आवश्यक है। इसके अलावा, ये बारीकियां किसी भी प्रतिक्रिया के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ी हताशा-निराशा व पीछे हटने की प्रवृत्ति को समझने में उपयोगी सिद्ध होती हैं।

किसी भी आंदोलन के आलेखन में पूर्वभूमिका का महत्व होता है। इसके अलावा कुछ मूलभूत विचारों को समझना जरूरी होता है। इतना ही नहीं, समाज के ढांचे और मूल्य व्यवस्था के साथ इन अवधारणाओं की जुड़ाव संबंधी स्पष्टता आंदोलन के विविध आविर्भावों के बारे में सुझाव दे सकती है। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था के भूतकाल की समझ वर्तमान को पहचानने के लिए आवश्यक है। भारतीय समाज का इतिहास सदियों पुराना है। भारतीय समाज समरूप नहीं बल्कि विविधतापूर्ण है। यह जाति, वर्ग, भाषा, लिंग जैसी विविधताओं से भरा हुआ है। वैश्विक स्तर के संदर्भ में भारतीय आंदोलन की समझ घटनाओं की समानता और विविधता का परिचय देती है। खासतौर पर यह कार्यकर्ताओं के लिए जरूरी व्यापक दृष्टि दे सकता है। संक्षेप में, मेरी धारणा है कि यह पुस्तक श्रृंखला नारी आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, अंतरराष्ट्रीय फलक, वर्तमान आंदोलन के क्षेत्र में मुद्दों और चुनौतियों को समझने के लिए स्थानीय कार्यकर्ताओं तथा अध्ययनकर्ताओं हेतु उपयोगी होगी। इसके अलावा, इस पुस्तक श्रृंखला में सरल भाषा, लोकगीतों, रेखाचित्रों आदि का प्रयोग हुआ है, जो उपेक्षित बहनों को आंदोलन की आवश्यकताएं समझाने में स्थानीय कार्यकर्ताओं के लिए सहायक होंगे।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान तथा कम्युनिस्ट आंदोलन के दौरान कार्यकर्ताओं को तैयार करने के लिए स्टडी सर्किल (अध्ययन समूहों) का महत्त्व समझा गया था। इन समूहों द्वारा कार्यकर्ताओं में आंदोलन के विविध चरणों और मुद्दों पर व्यवस्थित सघन-गहन विश्लेषण करने का माहौल बना। इसे पुनः जीवित करने की आवश्यकता लगती है। इस संदर्भ में इस पुस्तिका श्रृंखला जैसे प्रयोग सहायक होंगे।

पुनः 'उन्नति - विकास शिक्षण संगठन' तथा तृप्ति शाह एवं 'सहियर' का इस अभिनव प्रयास के लिए अभिनंदन!

नीरा देसाई
जनवरी-२००९

अर्पण

इस पुस्तिका श्रृंखला की प्रस्तावना लिखते समय नीरा बहन कैंसर से लड़ रही थीं। श्रृंखला की प्रथम पुस्तक उनके हाथ में देते समय हमें आनंद की अनुभूति हुई थी। दुर्भाग्यवश इसके बाद की पुस्तिका प्रकाशित होने से पहले २५ जून, २००९ की रात को नीरा बहन ने हमसे विदा ले ली। ऐसा अनुभव हुआ कि नारी आंदोलन और नारी अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण स्रोत और संकट काल के साथी को हमने खो दिया है।

डॉ. नीरा देसाई भारत में नारी अध्ययन तथा अनुसंधान की नींव डालने वालों में से एक हैं। जब महिलाओं की समस्याओं पर शायद ही कोई अनुसंधान होता था, तब १९५७ में उन्होंने 'भारतीय समाज में महिला जीवन' नामक शोध पुस्तक लिखी थी। वे भारत के प्रथम नारी अध्ययन केन्द्र, एस.एन.डी.टी. युनिवर्सिटी, मुंबई की संस्थापक-निदेशक थीं। उन्होंने महिलाओं की विविध समस्याओं तथा नारी आंदोलन पर गुजराती और अंग्रेजी में अनेक महत्वपूर्ण अनुसंधान और लेख प्रकाशित किए हैं। डॉ. नीरा देसाई की विशेषता यह है कि वे मात्र अध्येता ही नहीं, बल्कि शुरूआत से ही भारत के नारी आंदोलन से जुड़ी सक्रिय समर्थक भी रही थी।

जब नारी आंदोलन सहित तमाम प्रगतिशील आंदोलन आज की विकट एवं प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करने की कोशिश कर रहे हैं तब नीरा बहन की विदाई हमारे जैसे अनेक लोगों को व्यक्तिगत एवं संगठन स्तर पर वास्तव में अपूरणीय क्षति का अनुभव कराती है। जैसे कि एक युग का अंत हो गया हो! हम इस श्रृंखला की बाकी की पुस्तिकाओं को नीरा बहन को अर्पण करके कुछ हद तक उनका आभार स्वीकारने की कोशिश कर रहे हैं।

तृप्ति शाह **दीपा सोनपाल**

नारी आंदोलन का इतिहास

भाग २

अनुक्रम

आभार ८

भूमिका और परिचय ९

पुस्तिका श्रृंखला का उपयोग १७

देश विदेश की सीमाओं से ऊपर है, विचारों का विश्व **२०**

इंग्लैंड में मताधिकार हेतु महिलाओं का संघर्ष **३४**

फ्रांस की क्रांति और नव ज्ञानोदय युग **४२**

फ्रांस की क्रांति और महिलाओं का संघर्ष **५०**

संघर्ष जारी हैं... **५८**

अमेरिका में नारी अधिकार और गुलामों की मुक्ति हेतु संघर्ष **६६**

८ मार्च, अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का इतिहास **७६**

रूसी क्रांति की शुरूआतः
“हमें रोटी चाहिये ना कि युद्ध या तानाशाही” **८६**

हमारा इतिहासः हमारे संघर्ष **९८**

संदर्भ सामग्री की सूची १०८

आभार

हम 'उन्नति' के संस्थापक - निदेशक श्री बिनॉय आचार्य के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं कि उन्होंने नारी आंदोलन के इतिहास की पुस्तिकाओं को स्थानीय कार्यकर्ताओं के लिए तैयार करने हेतु सर्वप्रथम सुझाव दिया और उसके लिए निरंतर प्रोत्साहित किया।

पुस्तिकाओं को तैयार करने में फोटो कॉपी करने से लेकर डाक भेजना, साहित्य ढूंढ़ना, चाय पानी की व्यवस्था आदि कामों में उन्नति एवं सहियर के साथियों का भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ, जिसमें उन्नति के कमलेश भाई राठोड़, लक्ष्मणसिंह बी. राठोड़, लक्ष्मणसिंह एस. राठोड़, भवानसिंह राठोड़, सरदारसिंह राठोड़, करणसिंह राठोड़, रेनिसन एफ. रिबेलो एवं बीनू जॉर्ज तथा सहियर के कमल ठाकर शामिल हैं। साथ ही लेखा टीम में प्रेयस मेवाड़ा, धर्मिष्ठा हलपति एवं बिपिन त्रिपाठी ने हिसाब-किताब एवं वित्त संबंधी पहलुओं का ध्यान रखा।

उन्नति के रमेश पटेल, हितेश गोलकिया एवं सहियर की रेशमा वोरा ने पुस्तिका की अनेक प्रतियों को बारंबार सुधारने एवं टाइप करने में अपना पूर्ण सहयोग दिया। हिन्दी अनुवाद का मूल लेखों के साथ मिलान करके उसमें संशोधन हेतु सुझाव देने के लिए उन्नति की शम्पा बटब्याल, गीता शर्मा एवं स्वप्नी शाह तथा सहियर की रेशमा वोरा, कमल ठाकर, सुनंदा तायड़े, रीना जगताप, हेतल परमार, रीटा चोकसी, सूर्यकांता शाह, दीपाली घेलाणी, प्रिया संकपाल, प्रीतल ठाकर, राधा बाबी एवं साजेदा शेख के प्रति हम आभारी हैं।

जब से यह पुस्तिका वैचारिक अवस्था में थी तब से लेकर इसका पहला प्रारूप तैयार होने तक हमें नैतिक समर्थन एवं आलोचनात्मक सुझाव, मार्गदर्शक साहित्य एवं संदर्भ साहित्य प्रदान करने के लिए नारी अध्ययन एवं आंदोलन के अग्रणी साथी नीराबहन देसाई, विभूतिबहन पटेल, सोनलबहन शुक्ल, उषाबहन ठक्कर, सोफिया खान, रोहित प्रजापति, फादर जिम्मी डाभी, हसीना खान तथा संध्या गोखले ने सहयोग दिया। हम इन सबके प्रति हृदय से अभारी हैं। इन सभी के योगदान से ही इस स्तर की श्रृंखला का सृजन करना संभव हो पाया है।

भूमिका और परिचय

इस श्रृंखला का सृजन क्यों?

मानवता और समानता पर आधारित न्यायी समाज के सृजन की जद्दोज़हद में यदि आधी मानव जाति का दृष्टिकोण शामिल न हो, तो नई दुनिया का, बेहतर दुनिया का चित्र अधूरा ही रहेगा। पिछले दशक से इस बात को अधिकाधिक स्वीकृति मिलती गई है और इसीलिए विभिन्न क्षेत्रों में विकास तथा समाज परिवर्तन के लिए काम करने वाली संस्थाओं, संगठनों और लोक आंदोलनों के कार्यकर्ताओं में महिलाओं की भागीदारी, महिला विकास, जेंडर, महिला सशक्तिकरण जैसी अवधारणाएं प्रचलित हुई हैं।

सवाल यह है कि इस चरण में ही महिलाओं के मुद्दे क्यों सामने आए? क्या ये नए सवाल हैं या उनका कोई इतिहास भी है? और यदि इतिहास है, तो क्या उसे जानने और समझने की ज़रूरत नहीं है?

इतिहास शब्द सुनकर सामान्यतः राजा-महाराजाओं के साम्राज्य, अधिकारियों, योद्धाओं, नेताओं के पराक्रम के कालानुक्रम का चित्र आंखों के सामने आता है, क्योंकि हमारे स्कूलों में ऐसा ही इतिहास हमें पढ़ाया जाता है। इसीलिए सामान्य आदमी के मन में इतिहास जानने की कोई जिज्ञासा नहीं रहती, लेकिन इतिहास लेखन का एक महत्वपूर्ण प्रकार है सामाजिक इतिहास। इसमें राजा-महाराजाओं की नहीं, बल्कि समाज के विभिन्न वर्गों के जीवन-संघर्ष, कार्य और समाज को बदलने के प्रयासों आदि की बात भी होती है। हमारे आज की बुनियाद हमारे इतिहास में निहित है। यदि इतिहास को समझेंगे, तभी आने वाले कल के सृजन के लिए प्रभावी काम कर सकेंगे। हालांकि ऐसा सामाजिक इतिहास भी यदि मात्र पुरुष की कहानी (His Story) बन कर रह जाए और इसमें से महिला की कहानी (Her Story) अदृश्य रहे, तो इतिहास अधूरा ही होगा। अतः विकास या समाज परिवर्तन के कार्य से जुड़े तमाम कार्यकर्ताओं के लिए नारी आंदोलन का इतिहास जानना व समझना ज़रूरी है।

नारी आंदोलन का इतिहास मात्र स्त्रियों का इतिहास नहीं है, क्योंकि नारी आंदोलन समाज परिवर्तन के आंदोलन के साथ गहनता से जुड़ा हुआ है। जब-जब समाज में कोई बड़ी घटना घटती है, उथल-पुथल होती है, तब उसमें महिलाएं अहम भूमिका निभाती हैं।

विश्व की तमाम महान क्रांतियों और परिवर्तनों में स्त्रियों की भूमिका क्या थी, उनका क्या योगदान था और उसके परिणामस्वरूप वे क्या प्राप्त कर सकीं तथा क्या न पा सकीं, इन सबका बोधपाठ हमारी आगामी रणनीति तय करने में उपयोगी होता है।

वर्तमान चुनौतियां और इतिहास

६० के दशक में पश्चिम के देशों में शुरू हुए नारीवादी आंदोलन के साथ-साथ नारी अध्ययन का भी विकास हुआ और महिलाओं की परिस्थिति समझने के लिए दृष्टिकोणों का भी विकास हुआ। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था के ताने-बाने को उधेड़ने की शुरूआत हुई। कुदरती लिंग (Sex) के खिलाफ स्त्री-पुरुष की समाज प्रेरित व्याख्या, 'जेंडर' की संकल्पना विकसित हुई और इसका प्रभाव यूनाइटेड नेशन्स सहित तमाम अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं पर पड़ा। यह संभव ही नहीं था कि उनके विकास कार्यक्रमों व नीतियों पर विश्व भर में फैल रहे नारी आंदोलन का प्रभाव न पड़े।

मैक्सिको, नैरोबी और उसके बाद बीजिंग में हुई यू.एन.ओ. की अंतरराष्ट्रीय महिला परिषदों के बाद आज मुख्य धारा में जेंडर की सहभागिता – 'जेंडर मेनस्ट्रीमिंग' की बातें दुनिया भर की सरकारें और गैर-सरकारी संस्थाएं स्वीकारने लगी हैं। इसकी शुरूआत १९७० में ईस्टर बोसरप की डब्ल्यू आई डी (विकास में स्त्रियां) के नाम से प्रचलित दृष्टिकोण से हुई थी। उन्होंने स्त्रियों की आर्थिक सहभागिता को मुद्दा बना कर विकास के कार्यक्रमों में स्त्री जिस तरह बाहर रह जाती है, उसकी बात की और स्त्री को विकास की प्रक्रिया में जोड़ने की पैरवी शुरू की। इसके बाद डब्ल्यू ए डी (विकास और स्त्रियां) तथा जी ए डी (जेंडर और विकास) के रूप में प्रचलित दृष्टिकोणों द्वारा विकास की कथित मुख्य धारा और महिलाओं के स्थान (पोज़िशन) पर होने वाले उसके प्रभाव तथा समाज के तमाम ढांचों का स्त्री-पुरुष के बीच के सत्ता के संबंधों में स्त्रियों के गिरते स्थान का विश्लेषण किया गया। उसमें मूलभूत परिवर्तन की ज़रूरत के बारे में चर्चा की शुरुआत

हुई। इसके फलस्वरूप आज विकास तथा समाज परिवर्तन के तमाम क्षेत्रों में स्त्रियों की स्थिति (कंडीशन) और स्त्रियों के स्थान (पोजिशन) सम्बंधी समस्याओं को शामिल किया जाने लगा है।

भारत की बात करें, तो ७० के दशक में कुछ छोटे-छोटे स्वायत्त समूहों ने बलात्कार, दहेज, महिलाओं पर हिंसा, पारिवारिक कानून जैसे मुद्दों से लेकर समाज के विशाल समूह को छूने वाले तमाम मुद्दों में सहभागिता दर्ज कराई है। तब से लेकर इन वर्षों के दौरान नारी आंदोलन की व्यापकता और प्रभाव बढ़ा है। इसमें विभिन्न वर्ग, जाति, धर्म, यौनिक अभिरुचि, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और भाषा की पृष्ठभूमि वाले कार्यकर्ताओं तथा विविध प्रकार के महिला समूहों, बचत समूहों, लोक संगठनों ने भी सहभागिता दिखाई है। भारत तथा दुनिया के नारी आंदोलनों के सतत प्रयासों के फलस्वरूप ऐसा माहौल बना है, जिसमें किसी भी राजनीतिक दल, सरकार, फंडिंग एजेंसियों, विकास के कार्य करने वाले गैर-सरकारी संगठनों या जन आंदोलनों के लिए महिलाओं के मुद्दों की अवहेलना करना असंभव हो गया है। इसे विश्व और भारत के नारी आंदोलनों की सफलता कहा जा सकता है।

दूसरी तरफ, समाज के पुरुष प्रधान-पितृसत्तात्मक ढांचे के साथ वैश्वीकरण, उदारीकरण, धर्मांधता, कौमवाद तथा जातिवाद जैसी समस्याओं के माहौल जितने अधिक मजबूत ढंग से गुंथते जा रहे हैं उसी रूप में महिलाओं की समस्याओं की जटिलता भी बढ़ती जा रही है।

एक तरफ पुरुषों की जागीर माने जाने वाले व्यवसायों और शैक्षणिक संस्थानों में सफलता के सोपान हासिल कर रही स्त्रियों के सक्षम व्यक्तित्व की तस्वीरें देखने को मिलती हैं, तो दूसरी तरफ बेटियों की घटती संख्या, दहेज व सती जैसी समस्याएं नए रूप में उभर रही हैं, जिनसे महिलाओं के अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगा है।

समलैंगिक संबंधों या अलग प्रकार के यौन संबंधों वाले लोगों, वेश्या व्यवसाय से जुड़ी स्त्रियों के संगठनों द्वारा इन प्रतिबंधित माने जाने वाले विषयों की सार्वजनिक चर्चा तथा विरोध प्रदर्शनों को स्वीकृति मिलती दिखती है, तो साथ ही साथ सदियों पुरानी पारिवारिक हिंसा के प्रकार और प्रमाण दोनों बढ़ रहे हैं।

विकास नीति के फलस्वरूप समाज के सीमांत समूह और महिलाएं अधिकाधिक संख्या में हाशिये पर धकेले जा रहे हैं। इसके विरुद्ध आदिवासी, दलित, समुद्र तट के समुदाय, अल्पसंख्यक, आदि जीवन निर्वाह, प्राकृतिक संसाधनों पर अंकुश, हिंसा तथा बुनियादी मुद्दों को लेकर सतत संघर्ष कर रहे हैं। जैसे-जैसे समाज के सीमांत समूहों का संघर्ष आगे बढ़ रहा है, वैसे-वैसे उसमें महिलाओं की सहभागिता ही नहीं, बल्कि नेतृत्व भी आगे बढ़ता दिखाई दे रहा है। अपने कार्यक्षेत्र में सफल संघर्ष के अनेक उदाहरणों की प्रेरणादायी बातें सामने आती हैं, तो कभी-कभी वैश्वीकरण, धर्मांधता, कौमवाद, जातिवाद के तानेबाने में बनी पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष में दो कदम आगे तथा चार कदम पीछे जैसी स्थिति का अनुभव होता है। इसके प्रतिबिंब के रूप में प्रशिक्षण कार्यक्रमों, समन्वय बैठकों तथा स्थानीय कार्यकर्ताओं के साथ संवाद में, 'अब आगे क्यों?' या 'आगे किस तरह बढ़ा जाए?' जैसे सवाल बार-बार उठते हैं।

इस चरण में अनेक कार्यकर्ताओं का अनुभव दर्शाता है कि उभर रहे कुछ सवालों की जटिलता को समझने की निशानी हमारे संघर्ष के इतिहास से मिल सकती है, तो साथ ही साथ प्रेरणा देने वाले पात्रों और घटनाओं की भी कमी नहीं है। सफलता दूर की कौड़ी लगती हो, तब निराशा से बचने का रास्ता और समस्याओं से निपटने का आत्मविश्वास इतिहास के अध्ययन से ही जन्म लेता है। इसके अलावा समाज की दशा और समाज परिवर्तन की दिशा समझने की सैद्धांतिक स्पष्टता भी समझ में आती है। 'उन्नति-विकास शिक्षण संगठन' तथा 'सहियर' (स्त्री संगठन) मिल कर इस पुस्तिका श्रृंखला का प्रकाशन इस आशय से कर रहे हैं कि स्थानीय कार्यकर्ताओं को सरल भाषा में सामग्री उपलब्ध हो।

विचार का उद्‌भव और प्रक्रिया

इस संयुक्त प्रकाशन के विचार का उद्‌भव २००४ में हुआ। जेंडर सेंसिटाइज़ेशन हेतु प्रशिक्षणों में नारी आंदोलन के इतिहास के विषय पर शायद ही कभी चर्चा होती है। इन्हीं परिस्थितियों के बीच २००४ में अहमदाबाद में आयोजित जेंडर मेनस्ट्रीमिंग के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम में उन्नति के संस्थापक-निदेशक श्री बिनॉय आचार्य के आग्रह पर एक सत्र नारी आंदोलन के बारे में रखा गया था। 'सहियर' की सुश्री तृप्ति शाह ने इसका संचालन किया। तब, प्रशिक्षणार्थियों के लिए इस विषय पर उपयोगी साहित्य की ज़रूरत महसूस हुई। फरवरी, २००७ में गुजरात

के विभिन्न संगठनों के स्थानीय कार्यकर्ताओं के बीच गुजरात के नारी आंदोलन के क्षेत्रीय अनुभवों, नारीवादी विचारधारा तथा आगामी रणनीतियों के बारे में आयोजित परिसंवाद के दौरान भी ऐसे साहित्य की ज़रूरत महसूस की गई।

नारी आंदोलन का इतिहास दर्शाने वाली अधिकांश महत्वपूर्ण पुस्तकें अंग्रेजी भाषा में लिखी गई हैं और स्थानीय भाषाओं में भी इससे पहले कुछ महत्त्वपूर्ण प्रकाशन हुए हैं। परंतु, ऐसे साहित्य की कमी खलती थी जिसे स्थानीय कार्यकर्ता समझ सकें तथा दूसरों को समझाने में उपयोग कर सकें। अन्य कार्यों के दबाव के कारण यह काम शुरू नहीं किया जा सका।

जून, २००७ में दुबारा 'उन्नति' की ओर से पहल की गई और दीपा सोनपाल, गीता शर्मा तथा तृप्ति शाह ने इस दिशा में तत्काल ठोस कदम उठाने पर चर्चा की। शुरूआत में ७० से ८० पृष्ठों की एक सचित्र पुस्तिका तैयार करने का विचार था। परंतु जैसे-जैसे पुस्तिका में शामिल किए जाने वाले विषयों पर सोचा गया व अन्य मित्रों, विषय-विशेषज्ञों के साथ चर्चा हुई, तब काल और स्थल के विस्तार, मुद्दों, विवरणों, विश्लेषण आदि तमाम बातों को जोड़ना ज़रूरी लगा। इसे एक-दो माह में पूरा करने की अपेक्षा थी, लेकिन तृप्ति शाह की अस्वस्थता और रोजमर्रा के कार्यों के बीच एक वर्ष से अधिक समय में यह पुस्तिका टुकड़ों में लिखी गई। इस बीच 'उन्नति' के तमाम मित्रों के धैर्य की परीक्षा हुई, परंतु सभी के धैर्यपूर्ण आग्रह और सतत सहयोग के कारण अंततः हम यह काम पूरा कर सके हैं। आज यह छोटी सी पुस्तिका बढ़ते-बढ़ते चार अलग-अलग पुस्तिकाओं की श्रृंखला का रूप ले चुकी है।

विषयवस्तु और प्रस्तुति

प्रथम भाग, **'स्त्री जीवन संघर्षः प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक'**, में जेंडर, पितृसत्तात्मक जैसी नारीवादी अवधारणाओं के अलावा प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक के समय का समावेश किया गया है। इसमें भारत में पितृसत्तात्मक ढांचे के निर्माण की बात की गई है। जाति प्रथा तथा पितृसत्ता के तानेबाने द्वारा स्थापित ब्राह्मणवादी-पितृसत्ता की हल्की सी झलक दी गई है। हिन्दू धर्म के ब्राह्मणवाद के खिलाफ चुनौती के रूप में शुरू हुए बौद्ध धर्म तथा भक्ति आंदोलन की बात एवं इसमें महिलाओं की भूमिका का

उल्लेख किया गया है। इसी दौरान भारत में प्रचलित हो रहे इस्लाम का उल्लेख किया है। इस्लाम से पहले अरबस्तान में प्रचलित धर्म की तुलना में इस्लाम में मौजूद उदारवादी पहलू आज व्यवहार में दिखाई नहीं देते। यह बताया गया है कि पितृसत्ता के खिलाफ ये सभी प्रयत्न अपने स्थान, काल और उस समय की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थिति से प्रेरित थे और इस वजह से सीमित थे।

दूसरे भाग, **'स्त्री समानता और मताधिकारः विश्व में नारी आंदोलन'** में १९वीं सदी में, स्त्री समानता तथा मताधिकार के लिए विश्व में हुए संघर्ष की बात है। इस भाग में इस बात की जांच की गई है कि दुनिया में कोई भी बड़ा परिवर्तन स्त्रियों के योगदान के बिना संभव नहीं हुआ और स्त्री समानता के संघर्ष भी समाज के परिवर्तन के संघर्षों के साथ ही विकसित हुए हैं। इसमें पश्चिम के देशों में साम्यवादी व्यवस्था में से पूंजीवादी उत्पादन पद्धति लाने वाले समाज परिवर्तन के संघर्षों के साथ-साथ स्त्रियों के संघर्ष जिस तरह विकसित हुए उसकी बात, इंग्लैंड में हुए चार्टिस्ट आंदोलन, नवजागरण काल के विचारकों के स्त्रियों के प्रति विचार, फ्रांस की क्रांति, अमेरिका की गुलामी से मुक्ति का आंदोलन, अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का इतिहास एवं रूस की पूंजीवाद विरोधी क्रांति में स्त्रियों का योगदान और इन सब का स्त्रियों के अधिकारों के आंदोलन से संबंधों का समावेश किया है।

तीसरे भाग, **'सामाजिक सुधार तथा स्वतंत्रता आंदोलन में स्त्रियां'** में भारत में सामाजिक सुधार और उसके बाद स्वतंत्रता आंदोलन के काल का समावेश किया गया है। अंग्रेजी शासन के खिलाफ १८५७ की क्रांति में स्त्रियों खासकर दलित, आदिवासी स्त्रियों की भूमिका, सुधार आंदोलन में सुधारक, पुनरुत्थानवादी, अंग्रेज एवं दलित बहुजन समाज के सुधारक एवं सावित्री बाई फुले या पंडित रमाबाई जैसी स्त्रियों की भूमिका, शिक्षा एवं समानता के लिए रकमाबाई, रुकैया सखावत हुसैन जैसी स्त्रियों का संघर्ष, भारत में स्त्री संस्थानों की शुरूआत और आज़ादी की लड़ाई में अहिंसक सत्याग्रह, क्रांतिकारी समूह एवं आजाद हिंद फौज आदि तमाम मोर्चो पर स्त्रियों द्वारा किए गए योगदान का विचार कई प्रतिनिधि स्त्रियों के जीवन कथा के द्वारा पेश किया गया है। आजादी की लड़ाई में भाग लेने के बाद स्वतंत्र भारत में स्त्रियों को क्या मिला और क्या नहीं मिला उसका विवरण

दिया है और ६०-७० के दशक में हुए जन आंदोलन की बात का समावेश किया गया है।

चौथे व अंतिम भाग, **'नारी मुक्ति आंदोलनः समस्याएं और चुनौतियां'** में समकालीन नारी आंदोलन की प्रस्तावना, उसके शुरूआत के समय और हाल की समस्याओं और चुनौतियों को शामिल करने की कोशिश की गई है।

यहां यह स्पष्ट करना ज़रूरी है कि प्राचीन काल से आज तक के समग्र इतिहास को जांचने का हमारा आशय नहीं है। जिस उद्देश्य से यह श्रृंखला तैयार की गई है उसके लिए ऐसा करना ज़रूरी भी नहीं है। इस श्रृंखला का उद्देश्य ऊपर दर्शाए विस्तृत समय के दौरान, भारत और विश्व में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के बदलते स्वरूप के खिलाफ विविध चरणों में महिलाओं द्वारा किए गए विरोध तथा संघर्ष के विचार को स्थानीय कार्यकर्ताओं तक पहुंचाना है। इस आशय से श्रृंखला के विभिन्न भागों में प्रस्तुति की पद्धति और विवरणों की गहराई में भी थोड़ी विविधता है। जैसे, श्रृंखला की प्रथम पुस्तिका में भाषा तथा प्रस्तुति यथासंभव सरल रखने की कोशिश की गई है। दूसरे भाग में विश्व के नारी आंदोलन की बात करते समय उस काल में यूरोप की आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के बारे में विवरण तुलनात्मक रूप से अधिक गहराई से दिया गया है। आज हम जिस लोकतंत्र और सार्वभौमिक मताधिकार को सहज रूप से पूंजीवादी समाज की देन मानते हैं, उसे पाने के लिए जिस तरह सीमांत समूहों और खासकर महिलाओं को पूंजीवाद के शुरूआती चरण में संघर्ष करने पड़े तथा बलिदान देने पड़े, उन्हें समझने के लिए तत्कालीन परिस्थितियों को जानना बहुत ज़रूरी है। भारत के पाठक इससे अपरिचित होंगे, ऐसा सोचकर ये विवरण अधिक विस्तारपूर्वक दिये गये हैं। जबकि भारत के इतिहास के प्राथमिक विवरण से पाठक परिचित होंगे, ऐसा मान कर उसमें अधिक ज़ोर महिलाओं की भूमिका पर दिया गया है।

ऊपर के तीनों भागों में सम्बद्ध काल के संघर्ष और समस्याओं को कुछ महिलाओं की प्रेरणादायी जीवन गाथा के द्वारा समझाने की पद्धति अपनाई गई है। चौथे भाग में, १९७० के बाद हुए आंदोलन की बात करते समय संबंधित मुद्दों के इर्दगिर्द चर्चा की गई है। प्रत्येक मुद्दे पर वर्तमान नारीवादी समझ, उसके खिलाफ हुए विरोध की महत्वपूर्ण घटनाओं और उनका

विश्लेषण करने की कोशिश की गई है ताकि, पाठक अपने संगठन या कार्यक्षेत्र में होने वाली घटनाओं को इन मुद्दों के साथ जोड़ते हुए अपनी कार्यनीति में शामिल कर सकें।

सीमाएं और अपेक्षा

इस श्रृंखला में नारी आंदोलन के तमाम महत्त्वपूर्ण मुद्दों और घटनाओं को शामिल करने की कोशिश की गई है। इसके बावजूद यह संभव है कि कुछ मुद्दे छूट गए हों, किसी कारणवश उन्हें शामिल न किया गया हो या उन्हें पर्याप्त न्याय न दिया जा सका हो। प्रत्येक पुस्तिका में स्त्री-पुरुष समानता के अलावा प्रभुत्वशाली वर्ग, जाति और धर्म से ऊपर उठ कर तमाम सीमांत समूहों के दृष्टिकोण और उनके अनुभवों के उदाहरण प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है। इस सम्बंध में लेखों के बारे में अन्य विशेषज्ञों का सहयोग तथा अभिप्राय भी लिया गया है, परंतु फिर भी किसी सीमांत समूहों के अनुभव के बारे में हमारी समझ तथा सूचना की सीमा के कारण कोई त्रुटि रह गई हो, तो उस ओर ध्यान दिलाने का हमारा आग्रह है। पुस्तिका में शामिल मुद्दों, भाषा, प्रस्तुति और समाविष्ट नहीं किए गए मुद्दों के बारे में भी आपके सुझाव और प्रतिभाव आमंत्रित हैं।

दीपा सोनपाल
उन्नति - विकास शिक्षण संगठन

तृप्ति शाह
सहियर (स्त्री संगठन)

पुस्तिका श्रृंखला का उपयोग

यह पुस्तिका श्रृंखला महिलाओं तथा विकास के मुद्दों पर काम करने वाले स्थानीय कार्यकर्ताओं की जरूरतों को ध्यान में रख कर तैयार की गई है। स्थानीय कार्यकर्ताओं के लिए, नारी आंदोलन पर अपनी समझ विकसित करने के अलावा इस समझ को व्यापक रूप से समुदाय तक ले जाने के लिए सहायक साहित्य की जरूरत पड़ती है। इन दोनों जरूरतों को ध्यान में रख कर यथासंभव सरल भाषा में ये पुस्तिकाएं तैयार की गई हैं। पुस्तिकाओं के लेख के अलावा कुछ मुद्दों पर अतिरिक्त पठन और समाविष्ट मुद्दों पर अधिक जानकारी देने वाली पुस्तकों की सूची का भी समावेश किया गया है।

इस पुस्तिका को इस तरह तैयार किया गया है कि पुस्तिकाओं को पढ़ने के बाद कार्यकर्ता अपने कार्यक्षेत्र के लोक-समुदाय में इस विषय पर चर्चा कर सकें । नारी आंदोलन से जुड़ी घटनाओं को महिला समूह की बैठकों में होने वाली चर्चा के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इसे इस तरह से विभाजित किया गया है कि इसके हर भाग को बैठक में एक से डेढ़ घंटे में पढ़ा जा सके। मुद्दे के अनुरूप गीत, काव्य आदि को शामिल किया गया है ताकि इसे पढ़ना व समझना रोचक हो।

कार्यकर्ताओं की व्यापक समझ बने इसके लिए श्रृंखला की चारों पुस्तिकाओं को सम्पूर्ण रूप से पढ़ना जरूरी है। कार्यकर्ता स्थानीय समूहों की परिस्थिति के अनुरूप आंदोलन की घटनाओं का चयन करते हुए उन्हें प्रस्तुत करें। हालांकि, इस श्रृंखला की प्रथम पुस्तिका में बुनियादी विचार प्रस्तुत किये गए हैं। अतः इसे प्रत्येक समूह के लिए सम्पूर्ण रूप से पढ़ा या प्रस्तुत किया जा सकता है। श्रृंखला की अन्य पुस्तिकाओं का उपयोग, कार्यकर्ता स्थानीय समूह के स्वरूप व जरूरत के अनुसार कर सकते हैं।

हर प्रस्तुति के बाद समूह के सदस्यों के साथ चर्चा करना आवश्यक है। पुस्तिका में दिए गए उदाहरणों के अलावा, स्थानीय स्तर पर अधिक प्रचलित उदाहरण या गीतों का प्रयोग किया जा सकता है। चर्चा से निकल कर आए महत्वपूर्ण मुद्दों, उदाहरणों, गीतों आदि को प्रकाशक को भेजने का आग्रह है, जिससे भविष्य में उन्हें शामिल किया जा सके।

समूह में पुस्तिका पठन की प्रभावी प्रस्तुति हेतु कार्यकर्ताओं के लिए सुझावः

पुस्तिका में सात मुख्य पात्र हैं। प्रत्येक पात्र के चारित्रिक गुणों को समझकर उसके अनुरूप संवाद बोलने के लिए पात्रों के संक्षिप्त परिचय नीचे दिये जा रहे हैंः

एकताः महिला समूह की अग्रणी कार्यकर्त्री है। शिक्षा, पठन और संघर्षों के अनुभव द्वारा महिला मुद्दों पर गहरी समझ है। महिला समूह की समझ बढ़ाने की भूमिका निभा रही है।

शकरीः ४०-४५ वर्ष की सक्षम महिला है। हिंसा के कारण पति से तलाक लेकर दो संतानों को अपने बलबूते पर लालन-पालन कर रही है। अधिक पढ़ी-लिखी नहीं है परन्तु पितृसत्ता और जाति प्रथा का सामना करने के अपने अनुभवों से समाज व्यवस्था के बारे में उसकी समझ बनी है। अपनी हिम्मत और सूझबूझ से सवाल कर सकती है।

कमलाः २०-२२ वर्ष की कॉलेज में पढ़ाई करने वाली युवती है। वह अपने माता-पिता, दादा-दादी के साथ रहती है। वह भेदभाव व अन्याय सहन नही कर पाती। नई बातें जानने व स्वीकारने को उत्सुक है।

रेशमाः कमला की सहेली और हम उम्र है। उसके साथ ही पढ़ती है। सरल और उत्साही है।

आशाः ३०-३५ वर्ष की नौकरीपेशा शिक्षित महिला है। वैवाहिक जीवन में पति के संदेह और मानसिक त्रास से जूझ रही है।

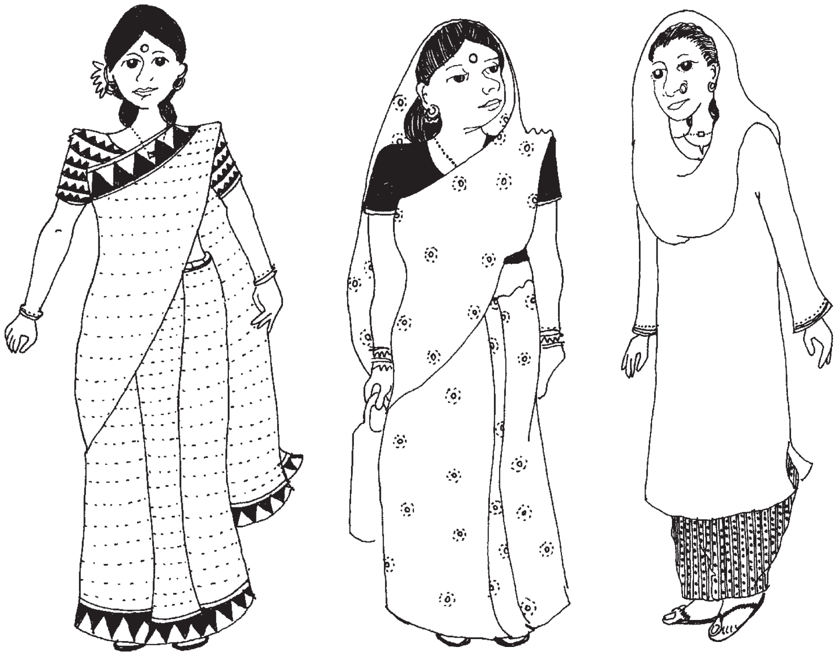

नीरूः ४०-५० वर्ष की प्रौढ़ महिला है। गृहिणी है। परंपरागत वातावरण में पली-बढ़ी है। समाज में प्रचलित रीति-रिवाज, परंपराओं पर विश्वास रखने के साथ-साथ नई बातें भी सुनने को तैयार है।

फरजानाः ३०-३५ वर्ष की महिला है। गृहिणी है। परम्परागत वातावरण में पली-बढ़ी है। लेकिन नई बात समझने को तैयार है।

- यदि अलग-अलग कार्यकर्ता इन पात्रों के संवाद प्रस्तुत करें, तो बहुत अच्छा होगा। लेकिन यह संभव न हो, तो एक या उससे अधिक कार्यकर्ता प्रस्तुति कर सकते हैं।
- यदि समूह में प्रभावी रूप से पढ़ने वाले सदस्य हों, तो कुछ पात्रों के संवाद समूह के सदस्यों को पढ़ने को कहा जा सकता है।
- जिस भाग को पढ़ना हो, उसे कार्यकर्ता पहले से पढ़ कर समझ लें।
- अधिकांशतः सरल भाषा और शब्दों का प्रयोग किया गया है, परंतु इसके बावजूद कोई शब्द नया या कठिन लगे तो उसका अर्थ और स्पष्ट उच्चारण पहले से मालूम कर लें।
- जहां जरूरी लगे, वहां पुस्तिका में दिए उदाहरणों-गीतों के बदले स्थानीय स्तर पर अधिक प्रभावी उदाहरण और गीत उपलब्ध हों तो उन्हें ढूंढ कर बैठक से पहले तैयार रखें।

देश विदेश की सीमाओं से ऊपर है, विचारों का विश्व

कमलाः एकता बहन आज तो हम विश्व के विभिन्न देशों की महिलाओं के संघर्ष के विषय में बात करने वाले हैं ना?

रेशमाः लोग प्रजा से नागरिक कैसे बने, उसकी भी जानकारी आज मिलेगी, है ना!

एकताः जरूर। पर ये आशा किन विचारों में खोई हुई है?

आशाः आज मेरे पति ने फिर से झगड़ा किया.... कहने लगे, दो पैसे क्या कमा लिये, अपने आपको पता नहीं क्या समझने लगी है, इसलिए कल से नौकरी बन्द!

नीरूः वो कह रहा है तो छोड़ दो ना, झगड़े का मुंह काला....

शकरीः अरे इस तरह नौकरी छोड़ देगी तो बाद में अगर पति की दादागिरी बढ़ गई तो उसे और रोशनी को कौन संभालेगा?

फरजानाः हां वैसे भी वे कुछ शक्की मिजाज के हैं और रोशनी के खर्च के लिए पूरे पैसे भी नहीं देते।

एकताः आशा तुमने क्या सोचा है?

आशाः मुझे तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है। उनकी नौकरी छूट जाने पर उन्होंने ही मुझे नौकरी करने के लिए कहा था और पिछले पांच साल से मैं ही घर का खर्चा चला रही हूँ। अब उनकी नौकरी लग गई है इसलिए वे कह रहे हैं कि दो पैसे क्या कमा लिये अपने आपको बहुत बड़ा समझने लगी हूँ और नौकरी के बहाने पराये पुरुषों के साथ हा-हा, ही-ही करती हूँ।

कमलाः अरे ये तो बहुत ही होशियार निकले। अपनी गरज पूरी होने पर तुम्हारी नौकरी छुड़वाना चाहते हैं?

आशाः मुझे तो वे रोज ही इस तरह की बाते सुनाते हैं, लेकिन आज हमारे संगठन और एकता बहन के विषय में भी उल्टी-सीधी बातें

सुनाने लगे, इसलिए मैं सहन नहीं कर पाई। कह रहे थे, 'तुम औरतें इकट्ठे होकर जिन लक्षणों को सीख रही हो, वह दूसरे देशों में चलता है अपने देश में नहीं'। एकता बहन ने तुम्हारे दिमाग में पश्चिम के विचारों की हवा भर कर, उन देशों के लक्षणों को सिखा कर गलत रास्ते पर चला दिया है। आज नौकरी करने लगी और कल वहां की तरह छोटे कपड़े पहन कर खुले आम घूमने लगोगी।

नीरू: ना - ना, उसकी ऐसी दादागिरी तो नहीं चला सकते। पर एक बात तो सही है कि परदेस की महिलाएं हरेक विषय में ज्यादा ही आज़ाद...

रेशमा: उनके देश के रहन-सहन अलग हैं इसलिए हमें ऐसा लगता है। वैसे उनके देश में भी महिलाओं को बराबरी का दर्जा नहीं मिला है। वे भी अधिकारों के लिए लड़ रही हैं।

एकता: आप की बात सही है। पश्चिम की महिलाओं को भी तो अधिकार कोई आसानी से नहीं मिले हैं। आशा का पति स्त्री समानता के संघर्ष को पश्चिम का विचार कह रहा है लेकिन जिस कामदार यूनियन की मदद से उसकी छूटी हुई नौकरी वापस

मिली, वह कामदार यूनियन भी पश्चिम के विचारों की ही पैदाइश है। थोड़े दिन पहले वह चुनाव में उनकी यूनियन के नेताओं का प्रचार करते हुए सब लोगों को मत देने के लिए समझा रहा था। वह चुनाव, मताधिकार और लोकतंत्र के विचार भी पश्चिम से ही आये हैं।

नीरू: अच्छा तो फिर ये पश्चिम के विचार और संस्कृति अपने देश में कैसे आ गये?

एकता: क्योंकि विचार, विचारधारा और संस्कृति देश-विदेश की सीमा से ऊपर होते हैं। दुनिया के हरेक देश के इतिहास में विचारों के आदान-प्रदान से ही संस्कृति समृद्ध होती है।

आशा: आज हम मताधिकार की बात करने वाले थे ना? तो चलो मेरी बात हम बाद में करेंगे। पहले मीटिंग की बातें करते हैं।

एकता: आज की चर्चा का यह नया चरण शुरू करने से पहले पिछले चरण में हमने प्राचीनकाल से भक्ति आंदोलन के दौरान महिलाओं के जन-संघर्ष की जो बातें की थीं, उनसे हमने जो सीखा, उसे थोड़ा-सा याद कर लें तो कैसा रहेगा?

फरजाना: हां, यह अच्छा रहेगा। कमला तुम खास-खास बातों को दोहरा दो ना।

कमला: ठीक है मैं ही शुरू करती हूं क्योंकि पिछले चरण की बात मेरे किस्से से ही शुरू हुई थी ना। पिछले चरण में सबसे पहले हमने यह देखा था कि स्त्री की जात और पुरुष की जात में कोई खास फर्क नहीं है।

शकरी: सही बात। कुदरत ने नर और नारी को जन्म दिया और दोनों सभी तरह से एक जैसे हैं। सिर्फ प्रजननतंत्र में फर्क है, ताकि मानवजात का वंश बेल आगे बढ़ सके।

आशा: पर समाज ने उनके काम, लक्षण और अधिकार में भेदभाव खड़ा कर स्त्री का दर्जा नीचा किया। ये भेदभाव कुदरती नहीं हैं इसलिए यह हमने देखा कि हरेक युग में, प्राचीन काल से लेकर आज तक महिलाओं ने इसके विरुद्ध किसी न किसी प्रकार से विरोध जताया है।

नीरू: हां, प्राचीनकाल में गार्गी, सीता और द्रौपदी के विरोध की बात हमने की थी।

एकताः और ये भी समझा कि कैसे मनुस्मृति के समय में महिलाओं की श्रमशक्ति, लैंगिकता और प्रजनन शक्ति पर अंकुश रखने के लिए पितृसत्तात्मक व्यवस्था मजबूत बनी और जाति प्रथा के साथ जुड़ गई।

फरजानाः हमने यह भी देखा कि बौद्ध धर्म और इस्लाम की शुरूआत कैसे पुरानी समाज व्यवस्था के विरोध में हुई थी।

कमलाः फिर भक्ति युग में महादेवी अक्का, मीराबाई जैसी भक्त महिलाओं ने परिवार और जाति के बंधनों को तोड़ा, उसकी भी बात की।

रेशमाः आखिर में यह बात भी की कि इन सब महिलाओं के संघर्ष से हमें प्रेरणा मिलती है। पर उनके ये संघर्ष व्यक्तिगत थे, समाज के पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती देने वाले नहीं थे। इसलिए आज भी यह व्यवस्था थोड़े बदले स्वरूप में हमारे ऊपर हावी है।

एकताः हमने यह भी समझा कि इन महिलाओं का संघर्ष व्यक्तिगत था क्योंकि प्रत्येक संघर्ष का स्वरूप उस समय की आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था के आधार पर बनता है। जिस समय जो ताकत सत्ता में रहती हैं, उससे वह तय होता है।

शकरीः इसीलिए हमने तय किया कि महिलाओं के सामूहिक संघर्ष की शुरूआत कैसे हुई और जिन परिस्थितियों में यह संभव हुआ, उसे हम समझेंगे।

आशाः तो अब महिलाओं का सामूहिक संघर्ष जिस तरह संभव हुआ उसके बारे में बात शुरू करो।

सामाजिक परिवर्तन में स्त्रियाँ और स्त्रियों के अधिकार

एकताः दुनिया के इतिहास में सामाजिक परिवर्तन का कोई भी संघर्ष महिलाओं के सहयोग के बिना संभव नहीं हो पाया और महिलाओं के समान अधिकार का संघर्ष सामाजिक परिवर्तन के संघर्षों के साथ-साथ विकसित हुआ है।

इस तरह आधुनिक नारीवादी आंदोलन को १८वीं सदी में यूरोप सहित पश्चिम के देशों के अर्थतंत्र, राज्य व्यवस्था और सामाजिक जीवन के सभी पहलुओं में हुए असाधारण परिवर्तनों का परिणाम कहा जा सकता है। उनमें से तीन महत्त्वपूर्ण क्रांतियों के बारे में हम चर्चा करेंगे-

(१) औद्योगिक क्रांति जिसकी शुरूआत इंग्लैंड से हुई और बाद में वह पूरे यूरोप-अमेरिका में फैली।

(२) फ्रांस की सामाजिक क्रांति जिसने मनुष्य जाति के इतिहास में पहली बार मेहनत-मजदूरी करने वाले वर्ग की सामूहिक शक्ति के महत्व को दर्शाया।

(३) अमेरिका में हुआ स्वतंत्रता का आंदोलन और गुलामी उन्मूलन का संघर्ष।

इन तीनों क्रांतियों की वजह से महिलाओं के समान अधिकार और समग्र नारी जाति की मुक्ति की मांग हेतु सामूहिक आंदोलन का बीजारोपण हुआ। इसकी शुरूआत मताधिकार के संघर्ष से हुई।

शकरी: ये यूरोप, अमेरिका, फ्रांस आदि अपने गांव से कितनी दूर होंगे?

कमला: देखो, मैं आपको दुनिया के नक्शे में ये सारे देश बताती हूं।

दुनिया का नक्शा

सभी बहनें नक्शे में अलग-अलग देशों को देखने लगीं।

नीरू: लेकिन इतनी दूर यूरोप-अमेरिका में घटी घटनाओं का असर हमारे देश की महिलाओं पर कैसे पड़ सकता था?

एकता: इसी बात की तो हम चर्चा कर रहे हैं। एक समय ऐसा था जब एक गांव में घटने वाली घटनाओं का असर पास के गांव में भी नहीं होता था। उस समाज व्यवस्था को हम सामंतवादी समाज व्यवस्था कहते हैं। लेकिन औद्योगिक क्रांति की वजह से जो नयी पूंजीवादी व्यवस्था आई उसने साम्राज्यवाद के नाम से पूरी दुनिया को अपने पैरों तले दबा लिया। दुनिया के तमाम देशों की अर्थ व्यवस्था, राजनीति और सामाजिक जीवन के सभी पक्षों पर इसका असर पड़ा।

आशा: यह सामंतवादी व्यवस्था कैसी थी और पूंजीवाद का मतलब क्या है?

सामंतवादी व्यवस्था

एकता: १०वीं से १२वीं सदी के यूरोप की बात है। उस समय वस्तुएं और सम्पत्ति बनाने के लिए आज की तरह कल-कारखाने या यंत्र नहीं

थे। व्यापार भी नाम मात्र का था। तमाम सम्पत्ति खेती से या पशुपालन से पैदा होती थी। तमाम जमीनें अलग-अलग जागीरों में बंटी हुई थीं। हर एक जागीर का एक जागीरदार (ठाकुर) था। छोटे ठाकुरों या जागीरदारों के ऊपर बड़े सामंत थे। इस तरह उनके भी ऊपर उमराव और सबसे ऊपर राजा होते थे। जागीरदार अपनी जागीर की जमीन का ही नहीं, बल्कि उस पर रहने वाले तमाम लोगों का भी स्वामी (लॉर्ड) माना जाता था। अच्छी से अच्छी जमीन उसकी निजी जागीर गिनी जाती और बाकी की जमीन के टुकड़े असंख्य बंधुआ किसान जोतते थे। ये बंधुआ किसान अपनी जमीन पर तो काम करते ही थे, साथ ही जागीरदार की जमीन पर बिना मजदूरी के बेगार करना भी उनका फर्ज था। जागीरदार की तरफ से जब भी बुलावा आता तब अपनी जमीन का काम उन्हें छोड़कर जागीरदार की जमीन पर काम करना पड़ता था। इसके उपरांत अपनी जमीन पर हुये उत्पादन का एक निश्चित हिस्सा भी जागीरदार, राजा, पादरी आदि को देना पड़ता था।

शकरी: मतलब ये कि जागीरदार बिना मेहनत किये ही जीते थे। लेकिन वो अपना वक्त कैसे बिताते थे?

एकता: अपनी जागीर को बढ़ाने के लिए जागीरदार हमेशा आपस में लड़ते रहते थे। हरेक छोटा सामंत अपने ऊपर वाले सामंत की युद्ध में मदद करता और अपने किसानों से प्राप्त सम्पत्ति में से उसे हिस्सा देता था। छोटे-बड़े सभी सामंत, उमराव मेहनत व उत्पादन का काम करना अपनी शान के खिलाफ और छोटा समझते थे। दूसरे जागीरदारों से युद्ध करना और बाकी के समय में मौज, मस्ती, शिकार और मनोरंजन करना ही उनका काम था।

फरजाना: तो क्या जागीरदार का शोषण रोकने के लिए राजा कुछ नहीं करते थे?

रेशमा: सुना नहीं तुमने? राजा तो इन सारे जागीरदारों, सामंतों और उमरावों से ऊपर था।

एकता: हां, और तमाम सामंतों के ऊपर रहने वाला राजा तो ईश्वर का अवतार माना जाता था।

नीरू: और धर्म गुरु क्या करते थे?

एकता: उस समय यूरोप में ईसाई धर्म प्रचलित था और यूरोप की एक तिहाई से भी अधिक जमीन के मालिक ये चर्च के पादरी

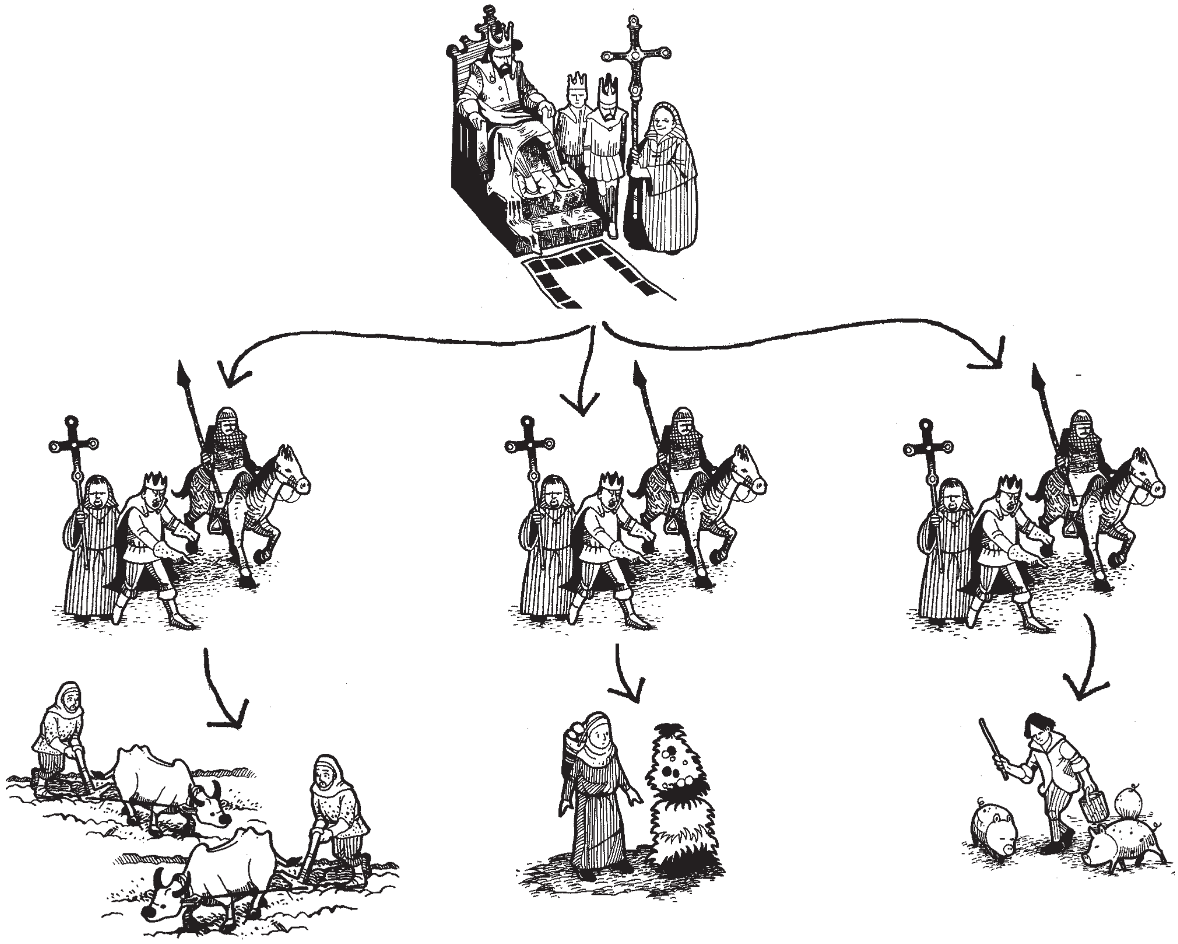

(ईसाई धर्मगुरु) थे। उनका वैभव भी गरीब किसानों के शोषण पर निर्भर था।

जागीरदार अपने बंधुआ मजदूरों को खेत में काम करने वाले पशु जैसे ही समझते थे। जिस तरह पशुओं की जरूरत पड़ती है, उसी तरह मजदूरों की जरूरत पड़ती थी। बंधुआ किसान अपने बच्चों के विवाह जागीर से बाहर नहीं कर सकते थे क्योंकि इससे जागीर में बंधुआ किसानों की संख्या कम हो जाती थी। प्रत्येक जागीर में जागीरदार का कहा ही कानून माना जाता था। इस प्रकार वही कानून बनाते, न्याय भी वही करते और सजा भी वही देते थे। वे चाहते तो अपने अधीनस्थ लोगों को मृत्यु दंड तक की सजा दे सकते थे। बंधुआ किसानों को मालिक का हुक्म मानने की आदत ठोक पीट कर सदियों से समझाई जा चुकी थी। धर्म उनका समर्थन करता था।

इस व्यवस्था में ऐसा सोचना भी मुश्किल था कि मनुष्य-मनुष्य के बीच के सम्बंधों में स्वतंत्रता-समानता हो सकती है, या सामान्य लोगों के कुछ अधिकार भी हो सकते हैं।

कमला: फिर उनमें बदलाव की शुरूआत कैसै हुई?

एकता: उस समय व्यापार भी बहुत सीमित था। प्रत्येक जागीर लगभग स्वावलंबी थी। रोजमर्रा की जरूरत की सभी वस्तुएं जागीर में ही मिल जाती थीं। लेकिन धीमे-धीमे व्यापार बढ़ने पर सामंती युग का स्वरूप बदलने लगा। सामंतों के किलों के आसपास बंधुआ किसानों - मजदूरों के झोंपड़ों के साथ-साथ व्यापारियों के कस्बों, नगरों और शहरों का विकास होने लगा। ये व्यापारी धीमे-धीमे देश-विदेश के व्यापार से इतनी सम्पत्ति कमाने लगे कि सामंतों, राजाओं को पैसा उधार देने लगे। पंद्रहवीं सदी तक यूरोप में अनेक शहर बस चुके थे।

इस व्यापारी वर्ग के व्यापार के विकास में यह सामंती व्यवस्था रुकावट थी क्योंकि प्रत्येक जागीर के अलग कानून, अलग कराधान और अलग मुद्रा थी। सामंतों की अंदर ही अंदर झगड़ने वाली, लूटपाट करने वाली फौज के बजाय पूरे विशाल प्रदेश में एक स्थिर-मजबूत सत्ता हो, एक राष्ट्र हो जिसमें एक-समान मुद्रा और कराधान हो तभी व्यापार विकसित हो पाता। अतः व्यापारियों ने छोटे-छोटे सामंतों से लड़ने के लिए राजा को मदद दी और यूरोप में पहली बार 'राष्ट्रवाद' का उदय हुआ।

शकरी: राष्ट्रवाद का क्या मतलब है?

एकता: सरल शब्दों में कहें तो राष्ट्रवाद अर्थात् अपने देश के प्रति अभिमान और वफादारी। लेकिन जब यह भावना 'मेरा ही देश सबसे महान है', ऐसी मानसिकता में बदल जाती है, तब यह दूसरे देश के साथ शत्रुता, युद्ध या उसको गुलाम बनाने तक चली जाती है। उसके मुकाबले दूसरे देश की गुलामी से मुक्ति पाने के स्वतंत्रता संग्राम में भी राष्ट्रवाद की भावना काम किया करती है।

सामंतवादी जमाने में अलग-अलग जागीरों में रहने वाले लोग अपने-अपने जागीरदारों के प्रति वफादार रहते थे। राष्ट्र अर्थात् देश जैसी कोई चीज़ तब नहीं थी। अब व्यापारियों की मांगों के अनुरूप अपना देश, उसका एक झंडा, एक कानून, एक मुद्रा

और देश के प्रति अभिमान की भावना आदि विचारों की शुरूआत हुई। राजा की सत्ता मजबूत करने के बदले में व्यापारियों ने उनसे अनेक अधिकार प्राप्त कर लिये।

आशा: इससे पूंजीवाद कैसे आया?

पूंजीवाद का विकास

एकता: सामंती युग के अंतिम समय में एक तरफ व्यापारियों की सत्ता बढ़ी तो दूसरी तरफ औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप नये-नये यंत्रों के आविष्कार हुए। इस तरह से पूंजीवाद की शुरूआत हुई। इन यंत्रों की मदद से उत्पादन कई गुणा ज्यादा होने लगा। उस समय के उत्पादन के आंकड़े देखें, तो कपड़ा, कोयला आदि तमाम वस्तुओं का उत्पादन पहले की तुलना में दस गुणा बढ़ गया था।

नीरू: मतलब यह कि खूब विकास हुआ और लोगों की गरीबी दूर हो गई?

एकता: विकास तो बहुत हुआ, पर लोगों की गरीबी दूर नहीं हुई, कइयों की तो उल्टे बढ़ गई।

शकरी: वह कैसे?

पारिवारिक व्यवसाय

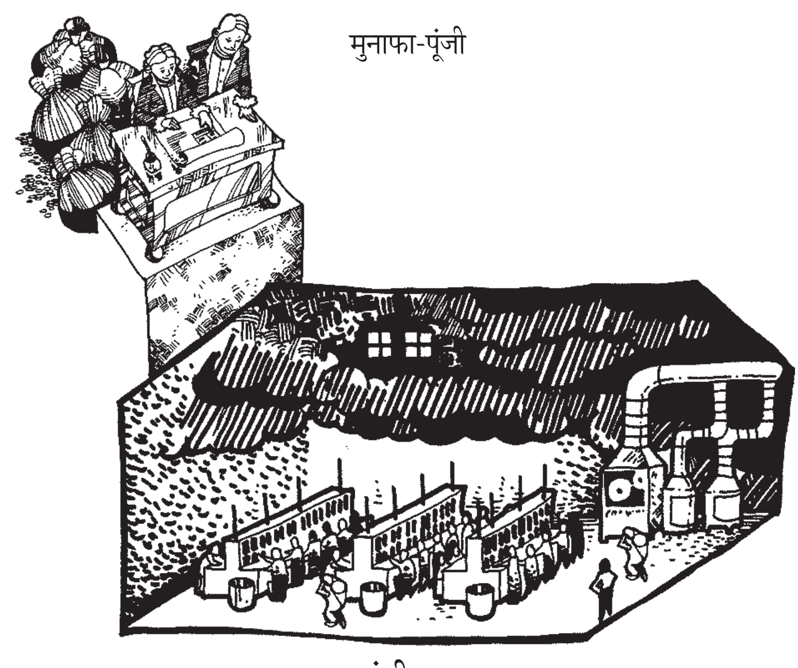

पूंजीवाद

एकता: पहले जिस तरह से जमीन के मालिक उत्पादन पर कब्जा जमाते थे, उसकी जगह अब उत्पादन की ऐसी व्यवस्था तेजी से बढ़ गई थी कि पूंजी के मालिक कारखानों, यंत्रों, खानों और उत्पादन के तमाम साधनों पर नियंत्रण रखने लगे। बड़े कारखानों के लिए ज्यादा पूंजी चाहिए थी। इसके लिए यूरोप के श्रमजीवियों और एशिया, अफ्रीका व दक्षिण अमेरिका के गुलाम देशों के शोषण द्वारा पूंजी प्राप्त की गई।

कमला: यूरोप के देशों ने दूसरे देशों के लोगों का शोषण किया, यह बात तो हम जानते हैं, पर नये-नये यंत्रों के आविष्कार से उनके अपने श्रमजीवियों का शोषण कैसे हुआ?

एकता: पहले कारीगर वर्ग अपने ही घर अथवा नजदीक की कार्यशाला में उत्पादन करता था। उसमें उसका पूरा परिवार और कभी-कभी दूसरे सीखने वाले या सहयोगी कारीगर काम करते थे। उनके उत्पादन के साधन सादे थे। उन साधनों पर और वे जो भी उत्पादन करते, उस पर उन्हीं का स्वामित्व था। उत्पादन से जो मुनाफा मिलता, वह भी कारीगर को ही मिलता था। अब अनेक यंत्रों वाले विशाल कारखानों के स्थापित हो जाने से उत्पादन सस्ता और तेजी से होने लगा, जिसके सामने कारीगर टिक नहीं पाये। कारीगर गरीब और कारखानों में काम करने वाले बंधुआ मजदूर बन गये। मजदूरों को बड़ी मुश्किल से गुजारे लायक मजदूरी मिलती थी। मजदूरों को इतनी कम मजदूरी मिलती थी कि उससे पूरे परिवार का गुजारा संभव नही था। अतः, परिवार के छोटे-बड़े सभी सदस्यों को मजदूरी करना जरूरी हो गया था।

रेशमा: लेकिन पहले भी तो पूरा परिवार काम करता था।

एकता: हाँ, लेकिन अपने परिवार के व्यवसाय में काम करने का तरीका और करखानें में मजदूरी करने की परिस्थिति, दोनों में काफी अंतर था। पूंजी के मालिक मुनाफा बढ़ाने के लिए मजदूरों से १६-१८ घंटे काम करवाते थे। कारखाने में मजदूर स्त्री, पुरुष या बालक को बिना हवा-रोशनी, मशीनों के शोर-शराबे के बीच मशीन की तरह ही काम करना पड़ता था। उनको पानी पीने तक की छुट्टी नहीं मिलती थी।

इस तरह उत्पादन बढ़ने के साथ मालिक की सम्पत्ति बढ़ती गई पर मजदूरों का शोषण ही बढ़ा। कभी-कभी उनकी हालत भुखमरी तक पहुंच जाती थी। सन् १८३६ में प्रकाशित एक पुस्तक में लिखा है कि 'दस लाख से अधिक लोग सचमुच भूखे मरते हैं और यह आंकड़ा बढ़ता जाता है। व्यापार के इतिहास में यह एक नया युग है। अंधाधुंध बढ़ता व्यापार श्रमजीवियों की दशा को सुधारने का नहीं परंतु उनकी गरीबी और अवनति का प्रतीक बन जाता है। इंग्लैंड ऐसे युग के किनारे आ खड़ा हुआ है।'

फरजाना: लेकिन क्या बालकों से भी इसी तरह काम कराया जाता था?

एकता: हां, क्योंकि बालकों और महिलाओं को पुरुष मजदूरों की बजाय कम मजदूरी देनी पड़ती थी। कभी-कभी मालिक अनाथ आश्रम से बालक खरीद लाते और उनसे अमर्यादित काम कराते थे। 'सात से बारह-चौदह वर्ष के बालकों से सुबह पांच से रात के आठ बजे तक काम कराया जाता था। यदि मशीन खराब हो या मिल बंद हो तो उनको उस समय की भरपाई बाद में करनी पड़ती थी'।

रेशमा: यह सब वे कैसे सहन करते थे?

एकता: शुरूआत में मजदूरों को लगा कि मशीन के कारण उनकी दशा बिगड़ी है अतः मशीनें उन्हें अपनी दुश्मन लगतीं। इस लिए उन्होंने यंत्रों को तोड़ना शुरू किया। इंग्लैंड की पार्लियामेंट ने एक कानून पारित करने की कोशिश की जिसमें मशीन तोड़ने वालों को मृत्यु दंड दिया जाने का प्रावधान था। लेकिन कई परिपक्व, समझदार सदस्यों ने इसका विरोध किया था।

शकरी: यह तो सामंतवाद से भी ज्यादा खराब लगता है।

एकता: तुम्हारी बात कुछ हद तक सही है, पर कारखाना पद्धति के कारण मजदूरों का संगठन संभव हुआ। धीरे-धीरे मजदूरों ने समझा कि मशीन तोड़ने से समस्या का समाधान नहीं होगा। विशाल कारखाने में एक साथ काम करने के कारण और एक साथ गंदी बस्तियों में रहने के कारण मजदूरों में ऐसी समझ बनी कि उन सबकी समस्याएं और मुद्दे एक समान हैं और उनके साथी मजदूर भी उनकी जैसी ही परिस्थिति में जीते हैं। इससे

लोगों में एकता की भावना उत्पन्न हुई। मजदूरों ने अपने अधिकारों के लिए मजदूर संगठन बनाकर संघर्ष करना शुरू किया।

आशाः मतलब मजदूर यूनियन बनाने कि शुरूआत उस जमाने में हुई।

एकताः हां और उनको लगा कि मजदूर-विरोधी कानून पारित करने वाली संसद में अगर उनका प्रतिनिधित्व हो तो वे मजदूरों को लाभ पहुंचाने वाले कानून पारित करवा सकेंगे। इसके लिए मजदूरों ने मताधिकार प्राप्त करने के लिए आंदोलन शुरू किया।

फरजानाः तो क्या महिला मज़दूर भी इस आंदोलन में जुड़ीं?

एकताः हां, महिला मजदूर और दूसरी स्त्रियां भी इस आंदोलन में जुड़ गईं थी।

कमलाः इसके बारे में हमें विस्तार से बताइये।

आशाः वो बात अब कल करेंगे। आज देर हो चुकी है और मुझे जल्दी घर जाकर अपने पति को ये सारी बातें बतानी है। मैं उसे बताना चाहती हूं कि कैसे मजदूर युनियन की शुरूआत हुई।

एकताः तो आज की चर्चा मजदूरों के शोषण के खिलाफ संघर्ष के गाने से समाप्त करेंगे।

जाम करो मिलके ये शोषण का पहिया

जाम करो मिलके ये शोषण का पहिया
मालिकों से लड़ने को एक हो जा भैया
जालिमों से लड़ने को एक हो जा भैया।

शकरी: लेकिन इस गाने में तो "भैया" शब्द का इस्तेमाल किया है, तो क्या हम मजदूर औरतों को इससे अलग रखेंगे?

एकता: नहीं। शकरी बहन आपकी बात सही है। हम "भैया" की जगह "साथिया" शब्द का इस्तेमाल करेंगे ताकि मजदूर औरतों को भी शामिल कर सकें।

जाम करो मिलके ये शोषण का पहिया
मालिकों से लड़ने को एक हो जा साथिया
जालिमों से लड़ने को एक हो जा साथिया।

तेरी ही कमाई से चले ये कारखाने
तुझको ही मिलते न पेट भर दाने
गिद्धों के जैसा तुझ से मालिक का रवैया
मालिकों से लड़ने को एक हो जा साथिया

हम से ना कम होगी मालिकों की दूरी
खून चूस चूस के जो देता है मजदूरी
अपनी ही नैया के हम है खेवैया
मालिकों से लड़ने को एक हो जा साथिया

अपने दिलों में सदा उनके ही गीत
जानते बदलना जो दुनिया की रीत
सीने में हमारे जिंदा भू मैया
मालिकों से लड़ने को एक हो जा साथिया

इंग्लैंड में मताधिकार हेतु महिलाओं का संघर्ष

एकता: कल हमने समझा कि कैसे नव-धनाढ्य व्यापारी वर्ग ने सामंतवाद के विरुद्ध एक सुदृढ राजसत्ता स्थापित करने में राजा की मदद की। इस मदद के बदले में उन्होंने राजा से कुछ अधिकार भी मांगे। ऐसी व्यवस्था बनाने के प्रयत्न किए कि राजा के साथ-साथ संसद को भी सत्ता मिले। इससे झगड़े होने लगे कि राजा और संसद दोनों में से किसके अधिकार ज्यादा होंगे। आखिर १६८८ में इंग्लैंड में रक्तहीन '**ग्लोरियस क्रांति**' के परिणामस्वरूप निरंकुश राजशाही का अंत हुआ और संसद की सर्वोच्चता स्थापित हुई।

रेशमा: इसका मतलब वहां लोकतंत्र स्थापित हुआ?

एकता: नहीं, आप समझते हो वैसा लोकतंत्र नहीं, क्योंकि यह संसद जैसी हम आज देखते हैं, वैसी तमाम लोगों के मत से चुनी हुई संसद नहीं थी। संसद में सामान्य लोगों, मजदूरों, बंधुआ किसानों या महिलाओं की कोई आवाज नहीं थी। मत देने का अधिकार पूंजीपति वर्ग में से भी मात्र गिने-चुने लोगों को था और संसद में कानून भी धनी वर्गों की सम्पत्ति के संरक्षण हेतु पारित होते थे। इसलिए अब श्रमजीवियों ने मताधिकार हेतु संघर्ष को जारी रखा। मजदूर यूनियनों के द्वारा तैयार किये गये मांग पत्र (पीपल्स चार्टर) के कारण इस संघर्ष का नाम '**चार्टिस्ट आंदोलन**' पड़ा। चार्टिस्ट आंदोलन में शुरू से ही महिलाओं ने सक्रिय भूमिका अदा की थी। इस आंदोलन के सार्वजनिक आयोजन, रैली, प्रदर्शनों में स्त्रियां अपने पुरुष साथियों के साथ जुड़ गई थीं। १८३८ के चार्टिस्ट घोषणा पत्र में सार्वभौमिक मताधिकार की मांग शामिल की गई थी।

नीरू: क्या है यह सार्वभौमिक मताधिकार?

कमला: सार्वभौमिक मताधिकार अर्थात तमाम वयस्क स्त्री-पुरुष नागरिकों को मत देने का अधिकार।

एकता: बिल्कुल! परंतु महिलाओं को मताधिकार मिलने के विरुद्ध समाज में और संसद में बहुत विरोध हुआ। इस विरोध को देखते हुए मजदूर संगठनों को लगा कि अगर वे महिलाओं के मताधिकार की बात करेंगे तो मजदूरों को मताधिकार मिलना मुश्किल हो जाएगा। अतः यूनियन के पुरुष नेताओं ने महिलाओं के अधिकार का मुद्दा एक तरफ रख दिया और मात्र पुरुषों के लिए मताधिकार की मांग सामने रखी।

फरजाना: इसे तो अपने फायदे के लिए महिलाओं के साथ दगा करना ही कहा जाएगा ना!

एकता: सही बात। इन सबके कारण महिलाओं को अपने मताधिकार की मांग के लिए अलग से संघर्ष करने की जरूरत महसूस हुई। डेविस एमिली नामक नारीवादी शिक्षा शास्त्री ने १८६६ मे जे. एस. मिल के साथ मिलकर महिलाओं के मताधिकार की मांग संसद में रखी। संसद में प्रस्तुत महिलाओं की मांग के खिलाफ दलीलें दी गईं, 'कि स्त्रियां पुरुषों से स्वाभाविक रूप से अलग हैं। उनका कार्यक्षेत्र घर है। जबकि राजनीति जैसे सार्वजनिक क्षेत्र में मात्र पुरुषों का ही अधिकार है।'

आशा: ऐसी दलीलें तो आज भी दी जाती हैं।

नीरू: हां। पिछली बार ग्राम पंचायत चुनावों में मुझे फार्म भरना था, तो सबने मुझसे कहा कि "चुपचाप अपना घर संभालो, पूरे गांव की पचांयत तुमसे नहीं होगी"।

एकता: तो कुछ लोगों ने कहा कि 'पुरुषों से अलग महिलाओं का कोई राजनीतिक हित नहीं है। उनको मताधिकार देने से सिर्फ मतदाताओं की संख्या दुगनी होगी और समाज का नुकसान ही होगा। समाज भ्रष्ट हो जाएगा।'

शकरी: मतलब कि उन्होंने थोड़े अलग शब्दों में बात तो वही कही कि 'औरत की बुद्धि पैर की एड़ी तले'।

फरजाना: हां, हमारे मोहल्ले में महिलाओं को चुनाव सभा में जाने के लिए तैयार किया तो सब कहने लगे कि तुम औरतों को वहां जाने की

क्या जरूरत है, हम मर्द लोग जायेंगे और हम तुम्हें बता देंगे कि किसे वोट देना है।

रेशमाः तो फिर महिलाओं ने इसका विरोध कैसे किया?

एकताः महिलाओं के अलग-अलग समूहों ने इन गलत और बिना तर्क की स्त्री-विरोधी मान्यताओं का विरोध अलग-अलग ढंग से किया। कुछ ने बताया कि स्त्री और पुरुष में अलगाव से ज्यादा समानता है। कुछ ने अलगाव स्वीकार करते हुए कहा कि स्त्री अलग है पर उसमें सही-गलत का निर्णय करने की विवेक-बुद्धि है। स्त्री किसी की हत्या करे तो उसे फांसी की सजा दी जा सकती है तो भला उसे मत देने का अधिकार क्यों नहीं? इस तरह १८७० तक ब्रिटेन के तमाम शहरों में महिलाओं के मताधिकार हेतु संघर्ष करने वाले समूहों की शुरूआत हो चुकी थी।

आशाः तो उनको सफलता कब मिली?

एकताः उनको अंतिम सफलता मिलने में तो अनेक वर्ष लगे, पर सर्वप्रथम एक छोटी सफलता उन्हें स्थानीय चुनावों (म्युनिसिपल इलेक्शन) में मताधिकार के रूप में मिली। उसमें ऐसी दलील दी गई कि महिलाओं को मां के रूप में बालकों के शिक्षण में और स्थानीय समस्याओं में रुचि लेनी चाहिए। यद्यपि यह मर्यादित अधिकार भी सिर्फ धनी-मानी अविवाहित महिलाओं को ही मिला था।

नीरूः तो धनी-मानी विवाहिता महिलाओं को क्यों नहीं?

एकताः इसलिए कि उस समय विवाहित स्त्री की सम्पत्ति उसके पति की मानी जाती थी। अतः ऐसी दलील दी गई थी कि पति के मत में पत्नी का मत आ ही जाता है। और उसे अलग से मत देने की जरूरत नहीं है।

कमलाः यह तो विवाहित और अविवाहित स्त्रियों के बीच बंटवारा करने की बात हुई।

एकताः हां, मताधिकार की इस लड़ाई में कभी पुरुषों के विरुद्ध महिलाओं को, तो कभी मजदूरों के विरुद्ध धनी-मानी महिलाओं को, कभी विवाहित के विरुद्ध अविवाहित महिलाओं को और कभी श्रमजीवी महिलाओं के विरुद्ध श्रमजीवी पुरुषों के अधिकारों को लेकर उन्हें परस्पर लड़वाया गया।

रेशमाः यानी, 'फूट डालो और राज करो' वाली नीति अपनाई गई।

एकताः सच कहती हो। लेकिन इससे स्त्रियां हताश होकर बैठी नहीं रहीं। २०वीं सदी की शुरुआत में १९०३ में **इमेलीन पेन्खर्स्ट** और उसकी दो बेटियों ने महिलाओं की सामाजिक व राजनीतिक यूनियन (द विमेन्स सोश्यल एन्ड पोलिटिकल यूनियन - डब्ल्यू.एस.पी.यू.) की शुरूआत की जिससे महिलाओं के मताधिकार की लड़ाई को गति मिली। उन्होंने विरोध प्रदर्शन के अनेक नये तरीके अपनाए। अपनी मांग की तरफ ध्यानाकर्षण के लिए कभी हिंसक मार्ग भी अपनाये। जैसे कि डाक-पेटियां जलाना, संसद के हाउस ऑफ कॉमन्स में घुसकर अपनी बात रखना, मंत्रियों के साथ धक्का-मुक्की के कार्यक्रम किए। एक बार अपनी मांग प्रस्तुत करने के लिए कैबिनेट मंत्रियों की मीटिंग में घुसने हेतु **एलिस पॉल** नामक एक कार्यकर्त्री रात भर वर्षा और सर्दी में हॉल की छत पर छिपी रही।

फरजानाः ये स्त्रियां तो बड़ी क्रांतिकारी लगती हैं!

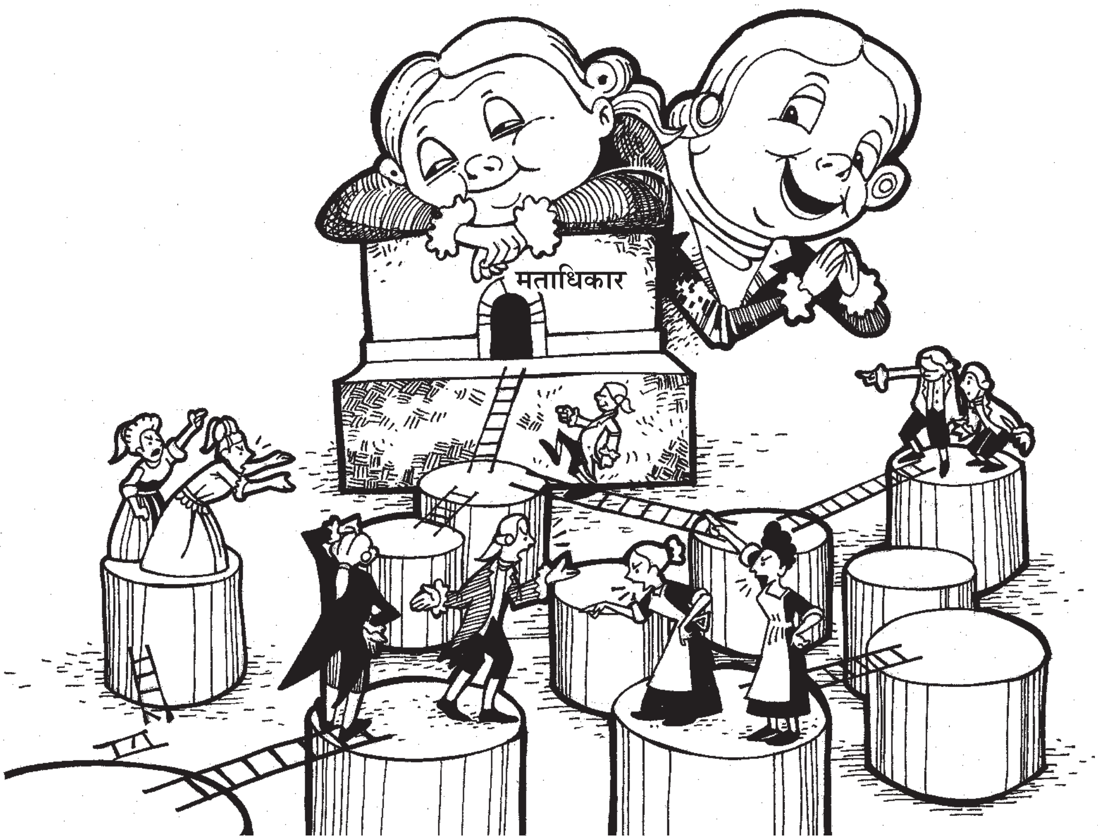

फूट डालो और राज करो

एकता: ठीक कहा तुमने। इस संघर्ष के दौरान १००० से भी अधिक महिलाएँ अपनी मांग के लिए लड़ती हुई गिरफ्तार हुईं। मध्यम वर्ग की पढ़ी लिखी महिलाएँ जेल गईं। इससे महिलाओं के प्रति समाज की परम्परागत मान्यताओं को जबर्दस्त धक्का पहुंचा।

नीरू: वह तो पहुंचेगा ही। यह बात उन्होंने सोची नहीं होगी कि सामान्य स्त्रियां भी ऐसा कर सकती हैं।

आशा: आज से सौ वर्ष पहले भी स्त्रियां ऐसा संघर्ष कर सकीं थी यह तो वाकई दाद देने वाली बात है।

एकता: पर उनका रास्ता आसान नहीं था। जब महिलाओं की गिरफ्तारी होती, तब जेल में अपनी लड़ाई जारी रखने के लिए वे भूख हड़ताल करतीं। उनकी भूख हड़ताल तोड़ने के लिए जेल के अधिकारी पीड़ाजनक तरीके से उनके गले में रबड़ की नली जबरन घुसाकर खाना खिलाते थे।

रेशमा: लेकिन सरकार के साथ इस तरह टकराने के सिवाय क्या दूसरा कोई रास्ता नहीं था?

एकता: था। कई महिलाओं ने वे रास्ते भी अपनाये। महिलाओं की सामाजिक व राजनीतिक यूनियन (डब्ल्यू.एस.पी.यू.) के उपरांत उस समय नेशनल यूनियन ऑफ वीमेंस सफरेज सोसायटी नामक एक बड़ा संगठन भी था जो इस तरह के ध्यानाकर्षक तरीकों में विश्वास नहीं करता था। उसने संवैधानिक तरीके से विशाल प्रदर्शन आयोजित करने की रणनीति अपनाई। परंतु डब्ल्यू.एस.पी.यू. की एक विशेषता यह थी कि उसमें अलग-अलग वर्ग की महिलाओं ने एक साथ काम किया। इसलिए इस आंदोलन ने मताधिकार के अलावा महिलाओं की रोजमर्रा का जिन्दगी से सम्बन्धित सवालों को लेकर भी आवाज उठाई।

फरजाना: क्या मतलब?

एकता: इस संगठन में एक तरफ **जेसी स्टेफन** जैसी मजदूर वर्ग की स्त्री थी जो घरेलू नौकर की तरह काम करती थी। बारह वर्ष की उम्र में वह इस संघर्ष से जुड़ी और यूनियन की नेता बनी। दूसरी तरफ **लेडी कोन्स्टंस लिटोन** जैसी उच्च वर्ग की स्त्री भी थी जिसने इन मजदूर महिलाओं के संघर्ष का साथ देने के लिए अपने वर्ग के विशेषाधिकारों को तिलांजलि देकर नारी एकता का एक हृदयस्पर्शी उदाहरण पेश किया।

कमला: उसने किस तरह अपने अधिकारों को छोड़ा?

एकता: जब लेडी कोन्सटंस लिटोन की गिरफ्तारी की गई तब भूख हड़ताल तुड़वाने के लिए उन पर जोर नहीं डाला गया, क्योंकि वे उच्च वर्ग की थीं। उनका हृदय कमज़ोर था, इसलिए उन्हें छोड़ दिया गया। लेकिन लिटोन तो अपने साथियों के साथ एकता प्रदर्शित करना चाहती थीं। अन्य गरीब वर्ग की साथिन जब जेल में जुल्म सहन कर रही हों, तब वे बाहर कैसे रह सकती थीं? उन्होंने अपने बाल काटे, मजदूर महिलाओं जैसे कपड़े पहने और पथराव कर गिरफ्तार हुईं। उस समय वह मजदूरों जैसी दिख रही थीं, इसलिए उन्हें जबरदस्ती खिलाया गया। इससे उनके हृदय पर असर पड़ा और दांया हाथ लकवाग्रस्त हो गया।

नीरू: भला ऐसा जुल्म भी कोई करता होगा?

एकता: इस जुल्मी तरीके का लोगों ने विरोध किया तो सरकार ने एक ऐसा कानून पारित किया जो 'चूहा-बिल्ली-कानून' के रूप में प्रसिद्ध हुआ। इस कानून के तहत जब भूख हड़ताल से महिला कैदी अशक्त हो जाए तब जबरन खिलाने के बजाय उसे छोड़ दिया जाता था, और स्वस्थ होने पर उसे फिर से गिरफ्तार कर लिया जाता था।

शकरी: सरकार ने जुल्म करने के एक तरीके के बदले दूसरा तरीका अपनाया। लेकिन इस संघर्ष का परिणाम क्या रहा?

एकता: इनके आंदोलन की वजह से महिलाओं की समस्याएं समाज के ध्यान में आईं, लेकिन उनको मताधिकार नहीं मिला। इसी दौरान प्रथम विश्व युद्ध छिड़ गया। तब मताधिकार का आंदोलन बंद करके महिलाओं ने सरकार को युद्ध में मदद करने का निश्चय किया। पुरुषों के युद्ध में जाने के कारण, महिलाओं ने पुरुष क्षेत्र के माने जाने वाले अनेक काम सफलतापूर्वक किये और अपनी क्षमता व शक्ति का परिचय दिया। उन्होंने ड्राइवर बन कर एम्बुलेंस चलाई, नर्स बनकर घायलों की सेवा की और शस्त्र-सामग्री के कारखानों में भी काम किया। ऐसे में युद्ध समाप्त होने पर महिलाओं को मताधिकार देने का विरोध कर पाना पुरुषों के लिए भी मुश्किल हो गया। अंततः १९१८ में ३० वर्ष से ऊपर की महिलाओं को मताधिकार मिला। दस वर्ष बाद १९२८ में सभी वयस्क महिलाओं को पुरुषों के समान मताधिकार मिला।

आशा: अर्थात, इंग्लैंड की महिलाओं को लगभग १०० वर्षों तक संघर्ष करने के बाद मत देने का अधिकार मिला।

एकता: हां, लेकिन इंग्लैंड की महिलाओं के इस संघर्ष की तुलना में फ्रांस की महिलाओं का संघर्ष ज्यादा लंबा और कठिन रहा। इस बारे में हम अगली बार बात करेंगे। आज हम औरतें मताधिकार क्यों चाहती हैं उसका गाना गायेंगे।

वोट की ताक़त

अपनी वोट की ताक़त दिखायेंगे - अपने मन में है ठानी
अपनी मर्ज़ी की दुनिया बनायेंगे - अपने मन में है ठानी

हाथ हमारे है सारा ज़माना
लीडर बनाना और उनको मिटाना
हाकिम हम हैं ये सब को बतायेंगे - अपने मन में है ठानी

गर चुप रहे तो पिछड़े रहेंगे
नेता हमारे मनमानी करेंगे
मनमानी न अब हम सहेंगे - अपने मन में है ठानी
बेईमानी न अब हम सहेंगे - अपने मन में है ठानी

औरतों के हक में कानून बनायें
वादे करें और करके निभायें
ऐसे लीडर को हम सब चुनेंगे - अपने मन में है ठानी

इल्मो शऊर को अपना बना के
इक नई दुनिया का सपना सजा के
मिल-जुल आगे बढ़ते चलेंगे - अपने मन में है ठानी

- कमला भसीन

("डोला पिछवाड़े रख दो" की धुन पर आधारित)

फ्रांस की क्रांति और नव ज्ञानोदय युग

एकता: १८वीं सदी के अंतिम भाग में हुई फ्रांस की सामाजिक क्रांति ने इतिहास में पहली बार मेहनतकश वर्ग की सामूहिक शक्ति का दर्शन कराया।

रेशमा: हां, हमने पढ़ा है कि फ्रांस की क्रांति ने दुनिया को 'समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व' के विचार प्रदान किये हैं।

एकता: इस क्रांति में वहां की गरीब महिलाओं ने विशाल संख्या में, आगे बढ़कर संघर्ष करने की अदभुत भूमिका अदा की। परंतु समाज में ऊंच-नीच के भेदभाव वाली व्यवस्था को हिला देने वाली फ्रांस की क्रांति के परिणामस्वरूप जब अधिकार देने की बात आई तब सिर्फ कुछ पुरुषों को ही मताधिकार दिया गया।

आशा: यह कैसे हुआ, जरा विस्तार से बताओ ना!

एकता: १८वीं सदी में फ्रांस में लुई वंश के राजाओं का राज था। एक के बाद एक राजा के शासन काल में सामान्य जनता की हालत बद से बदतर होती गई। राजा और उसके चाटुकार दरबारी कुछ भी कामकाज किये बिना राज्य की आय को खुले हाथों अपने आमोद-प्रमोद और रास-रंग में लुटा रहे थे। फ्रांस का समाज तीन-स्तरीय वर्ग (एस्टेट) में बंटा हुआ था। प्रथम दो वर्गों में सामंत, उमराव और पादरी थे। ये सबसे ज्यादा सम्पत्तिशाली दोनों वर्ग, विशिष्ट अधिकार भोगते थे। वे कराधान से मुक्त थे।

नीरू: ऐसा क्यों?

एकता: कहा जाता था कि सामंत-उमराव राजा के मददगार बनकर राज्य की रक्षा का काम करते हैं, और पादरी शिक्षा तथा धर्म संबंधी दायित्व वहन करते हैं। अतः उनको कोई कर नहीं भरना पड़ता था। परंतु तीसरा स्तर जिसमें बंधुआ-किसान, व्यापारी और मध्यम

वर्गों का समावेश था, यह वर्ग राजा के लिए कुछ ऐसे उम्दा काम नहीं करते, अतः उनके लिये कर भरने और उद्योग चलाकर राज्य की सेवा करने का नियम था। आप लोगों को जान कर आश्चर्य होगा कि किसान अपनी आमदनी का ८० प्रतिशत हिस्सा अलग-अलग प्रकार के करों द्वारा भरता था और शेष २० प्रतिशत में किसान परिवार का गुजारा बहुत मुश्किल से हो पाता था।

शकरी: ऐसे अन्याय के विरुद्ध क्या किसान विद्रोह नहीं करते थे?

एकता: उस समय फ्रांस में प्रायः किसानों के दंगे होते थे। एक बार भूख से पीड़ित जनता ने जब हल्ला मचाया तो लुई के गवर्नर ने उनसे कहा-'अब घास उगने लग गया है। खेतों में जाओ और चर लो'।

फरजाना: यह तो मानो 'घाव पर नमक छिड़कना' हुआ।

एकता: हां। यही कहा जायेगा, पर धीरे-धीरे व्यापारियों, लेखकों, वकीलों, उद्योगपतियों, डॉक्टरों, शिक्षकों, आदि या विकासमान मध्यम वर्ग वाला भी सामंत युग के बंधनों से परेशान होने लगा। उनके असंतोष को महान दार्शनिकों के विचारों का साथ मिला। वाल्टेयर, रूसो, मोन्टेस्क जैसे विचारकों ने 'मानवीय स्वतंत्रता', 'धार्मिक अंध-श्रद्धा के विरुद्ध बुद्धिवाद और तर्क' की बातें की। रूसो ने अपनी पुस्तक में लिखा, 'मनुष्य स्वतंत्र जन्म लेता है लेकिन सर्वत्र बंधन में दिखाई देता है।'

नीरू: अरे, लेकिन ऐसे तमाम दार्शनिकों के मोटे-मोटे ग्रंथों को कौन पढ़ता होगा?

आशा: क्या सामान्य गरीब जनता पर विचारकों का असर पड़ता था?

एकता: विचारों का असर समाज परिवर्तन के किसी भी संघर्ष के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है।

कमला: लेकिन विचारों से समाज थोड़े ही बदलता है? मैं रोजाना विचार करती हूं कि महिलाओं को समान अधिकार मिलें। पर विचार मात्र से महिलाओं को अधिकार थोड़े ही मिल जायेगा? उसके लिए तो संघर्ष करना ही पड़ेगा ना!

एकता: तुम्हारा प्रश्न महत्त्वपूर्ण है। मात्र विचारने से समाज नहीं बदलता, लेकिन बिना विचार किये, समाज को समझे बिना, सिर्फ संघर्ष करने से भी समाज नहीं बदलता। इसके लिए वर्तमान समाज को समझना पड़ता है और आने वाला समाज कैसा होगा, उसके बारे में भी विचार करना पड़ता है। जब नये समाज का समर्थन करने वाले

विचार समाज के अधिकांश लोगों तक पहुंचते हैं तब नये समाज की जड़ें जमती हैं। इस प्रकार समाज को बदलने के लिए विचारधारा बहुत महत्त्व रखती है। जिस तरह से सामंतवादी व्यवस्था को पलटने के लिए और पूंजीवादी व्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए नये ज्ञानोदय युग (एज ऑफ एन्लाइटेनमेन्ट) के विचारों ने अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

शकरी: यह नव ज्ञानोदय युग क्या है?

एकता: हम फ्रांस की क्रांति की चर्चा करते-करते दूसरी तरफ चले गए हैं, लेकिन इसकी चर्चा भी महत्त्व रखती है, अतः पहले इसके बारे में थोड़ा समझ लें।

नव ज्ञानोदय युग (एज ऑफ एन्लाइटेनमेन्ट)

यूरोप में १७वीं और १८वीं सदी का समय नव ज्ञानोदय युग के रूप में भी जाना जाता है। यह काल मध्य युग की परम्परागत मान्यताओं, अंध श्रद्धाओं के विरुद्ध तर्क के युग के रूप में पहचाना गया। मध्य युग में धर्म और राज्य की संयुक्त सत्ता के विरुद्ध नव ज्ञानोदय युग के अनेक विचारकों ने चुनौती दी। उनमें कुछ नाम वाल्टेयर, रूसो, डेविड ह्यूम आदि थे। चर्च द्वारा नये विचारों और वैज्ञानिक शोधों को दबाने की जो कोशिश हो रही थी उस धार्मिक असहिष्णुता के खिलाफ विचारकों ने चुनौती दी थी। उन्होंने राज्य की तानाशाही के खिलाफ नागरिकों के अधिकारों की बात भी की थी। इन नये विचारों के अनुसार राज्य को नागरिकों की सहमति के बिना उन पर राज करने का अधिकार नहीं था। राज्य का यह अधिकार अनुबंध के द्वारा मिलता है। इस प्रकार उन विचारकों के विचारों में समाज के बुनियादी मूल्यों, स्वतंत्रता, लोकतंत्र और तर्क आदि की बातें थी।

ये विचार नयी उभरती पूंजीवादी व्यवस्था के विकास के लिए मददगार बने, क्योंकि चर्च और सामंतों की तर्कहीन सत्ता के खिलाफ उनके संघर्ष को विचारों का ढाँचा प्राप्त हुआ।

रेशमा: तब तो इन विचारकों ने उस समय के सामान्य लोगों के अधिकारों की लड़ाई में बहुत योगदान दिया होगा, नहीं?

एकता: सच्चाई तो यह है कि स्वतंत्रता, समानता, लोकतंत्र और मानव के नैसर्गिक अधिकारों की बात को अनेक विचारकों ने मात्र सम्पत्तिशाली पूंजीवादी वर्ग तक ही सीमित रखा था।

सम्पत्तिविहीन, श्रमजीवियों और गुलामों को बहुत संघर्ष के बाद यह अधिकार मिला और महिलाओं को तो उसके बाद भी मताधिकार के लिए सदियों तक जूझते रहना पड़ा। तुम लोगों को जानकर आश्चर्य होगा कि इसी युग के दौरान अफ्रीका के हब्शी लोगों को पकड़कर जानवरों की तरह कैद करके उनका व्यापार और अमेरिका की बंजर जमीन पर उनसे गुलामी कराने का काम शुरू हुआ था। उसी समय हजारों महिलाओं को डायन मानकर जिंदा जला देने की घटनाओं से यूरोप-अमेरिका का इतिहास भी कलंकित हुआ।

नीरू: डायन! तो क्या अपने गांवों की तरह यूरोप में भी डायनें थी?

कमला: नीरू! सच पूछो तो डायन जैसा कुछ नहीं है, यह सब सिर्फ मन का वहम है।

फरजाना: नहीं रे, हमारे गांव में भी....

रेशमा: अरे, तुम लोग अगर डायन हैं या नहीं, इसी चर्चा में पड़ जाओगी तो बात गलत दिशा में चली जायेगी।

एकता: बिलकुल। कमला और रेशमा की बात सही है। इस बारे में हम फिर कभी विस्तार से चर्चा करेंगी। पर यूरोप-अमेरिका में महिलाओं को डायन मानकर मौत के घाट क्यों उतार दिया गया था, यह बात संक्षेप में कहूँगी। १५वीं सदी से शुरू करके १९वीं सदी तक यूरोप-अमेरिका में लाखों औरतों को डायन मानकर मार डाला गया था।

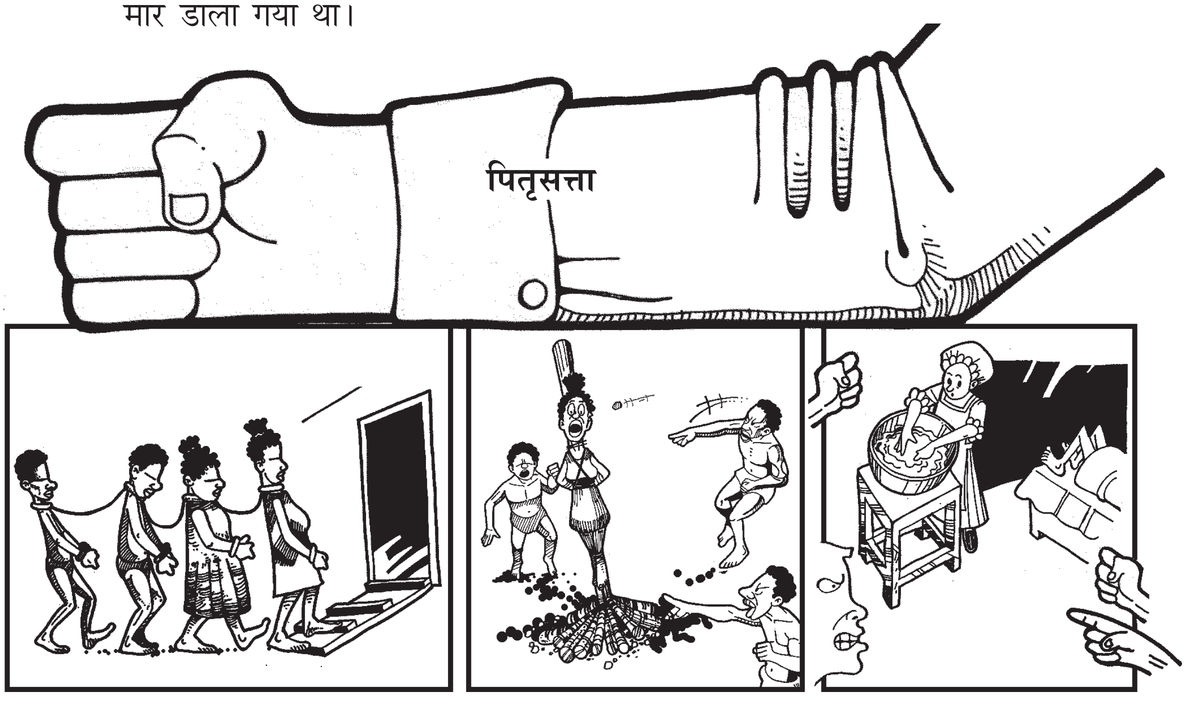

आशा: इतनी विशाल संख्या में महिलाओं के साथ क्रूर बर्ताव करने का क्या कारण था?

एकता: बहाने तो धर्म के नाम पर अनेक बताये जाते थे, जैसे - कोई स्त्री जादू टोने करती है..... उसने किसी को जहर दिया है.... वह पापिन है, इत्यादि-इत्यादि, पर मूल बात यह थी कि यह सब महिलाओं को डराने का और स्थायी रूप से पुरुषों की सत्ता तले दबाये रखने का षडयंत्र था। शोध कर्त्ताओं द्वारा किये गये शोधों से ये तथ्य प्रकाश में आये हैं कि ज्यादातर जो स्त्रियां वृद्ध हों और सामाजिक दृष्टि से उपयोगी न हों, अथवा खूब मजबूत हों और सामाजिक या धार्मिक सत्ताधीशों के विरुद्ध आवाज उठाती हों या फिर वे दाइयां हो और वैद्यकी द्वारा गरीबों की या महिलाओं की मदद करती हों, जो महिलाओं को बच्चे होने से रोकने में या गर्भपात कराने में मदद देती हों, ऐसी होशियार महिलाओं को डायन घोषित करके उन्हें जला दिया जाता था अथवा फांसी पर लटका दिया जाता था।

शकरी: लेकिन महिलाओं की इस तरह मदद करना क्या अच्छा काम नहीं माना जायेगा?

एकता: अच्छा ही माना जायेगा, परंतु धर्मगुरु तो यह कहते थे कि बच्चे को आने से रोकना या गर्भपात कराना एक पाप है। कई अध्ययन यह भी बताते हैं कि जैसे-जैसे डॉक्टरी विज्ञान को व्यवसाय का दर्जा मिलता गया, वैसे-वैसे महिलाओं को इससे वंचित रखने के लिए अगर कोई महिला औषधि या वनस्पति द्वारा लोगों का इलाज करती तो उसे डायन बता के दंडित किया जाता था ताकि वे इससे दूर रहें व इस नये व्यवसाय में पुरुषों का वर्चस्व बना रहे।

रेशमा: लेकिन नव ज्ञानोदय युग के विचारकों ने इस बारे में कुछ नहीं कहा, जो चर्च की सत्ता का विरोध करते थे?

एकता: नव ज्ञानोदय युग के कुछ विचारकों द्वारा महिलाओं को मदद मिली थी, पर कई स्पष्ट रूप से महिलाओं के समान अधिकार के खिलाफ थे। सामंतशाही में महिलाओं को ईश्वरीय कानून के नाम पर निम्न दर्जे का रखा गया था, उसकी जगह इन विचारकों ने उससे भी अधिक भयंकर 'कुदरत के कानून' की बात कही।

इनमें से कई वैज्ञानिकों, डॉक्टरों, दार्शनिकों, ने आदर्श 'मनुष्य' का एक ऐसा चित्र खड़ा किया जो एक 'पुरुष' का चित्र था और स्त्री के पूर्ण मनुष्य होने को लेकर भी उन लोगों ने संदेह व्यक्त किया था। इन विचारों के आधार पर स्त्री और पुरुष के काम और भूमिका को दो भागों में बांटा गया-सार्वजनिक जीवन में पुरुष और घर के कोने में स्त्री।

कमला: लेकिन आधी मानव आबादी, औरतो के प्रति इस अन्याय को उन्होंने किस दलील से सही ठहराया?

एकता: जैसे कि फ्रांस के विख्यात विचारक रूसो ने शिक्षा संबंधी अपनी विख्यात पुस्तक 'एमिली' में कहा कि, "स्त्री का सृजन पुरुष को खुश रखने के लिए हुआ है। अगर इसके बदले में पुरुष स्त्री को खुश करे तब ठीक है पर ऐसा करने का कोई सीधा दायित्व नहीं है। पुरुष के गुण उसकी सत्ता में हैं, क्योंकि वह मजबूत है। यह प्रेम का कानून नहीं हैं, कुदरत का कानून है। कुदरत का कानून प्रेम की बजाय बहुत पुराना है।" उसने यह भी कहा कि असमानता के विरुद्ध महिलाओं के संघर्ष का कोई आधार ही नहीं है, क्योंकि स्त्री-पुरुष के बीच की असमानता तो प्राकृतिक है। अतः स्त्री को शिक्षण मिलना चाहिए, पर कैसा? जो उसे घरेलू गृहिणी बनाये....'स्त्री अगर मधुर और विनयी है तभी सुंदर लगती है। अगर उसमें ये गुण न हों, तो वह पुरुष के लिए निरर्थक है।'

शकरी: मानो स्त्री कोई इन्सान नहीं लेकिन पुरुष के लिए बनाई गई कोई चीज हो!

एकता: इंग्लैंड के विचारक जेम्स मिल (१७७३-१८३६) के विचारों के अनुसार स्त्री को मताधिकार की जरूरत ही नहीं है क्योंकि उसके हित का रक्षण उसके पिता या पति के मताधिकार में आ ही जाता है।

इस प्रकार बौद्धिकों और नव जागरण के कई दार्शनिकों ने उस समय के समाज के प्रत्येक समूह जैसे प्रोटेस्टेंट, ज्यू, गुलामों और काले लोगों के अधिकारों को लेकर चर्चा चलाई थी, परंतु महिलाओं के अधिकारों के सम्बन्ध में तो उन्होंने परंपरागत दृष्टि ही अपनाई थी। वे महिलाओं को शरीर विज्ञान की दृष्टि से पुरुष

से अलग मानते थे। अतएव उनकी भूमिका वे सार्वजनिक राजनीति में नहीं वरन् घरेलू क्षेत्र में ही मानते थे।

फरजाना: तो क्या उस समय फ्रांस की महिलाओं की समाज में कोई भूमिका नहीं थी?

एकता: वास्तव में महिलाओं का योगदान समाज में बहुत अधिक था। फ्रांस की अधिकांश स्त्रियां किसान, दुकानदार, धोबिन आदि अलग-अलग प्रकार के रोजगार में लगी हुई थी और इसीलिए फ्रांस की क्रांति में अधिकांश स्त्रियां अपने और परिवार के जीवन निर्वाह के सवाल को लेकर सड़कों पर आई थीं। इसी भावना को व्यक्त करने वाले एक गाने से हम आज की चर्चा समाप्त करेंगे। और फ्रांस की स्त्रियों के संघर्ष के बारे में बाकी बात कल करेंगे।

इसलिए राह संघर्ष की

इसलिए राह संघर्ष की हम चुनें
ज़िंदगी आंसुओं में नहाई न हो
शाम सहमी न हो रात हो न डरी
भोर की आंख फिर डबडबाई न हो

सूर्य पर बादलों का न पहरा रहे
रोशनी रोशनाई में डूबी न हो
यूं न ईमान फुटपाथ पर हो खड़ा
हर समय आत्मा सबकी ऊबी न हो
आसमान में टंगी हो न खुशहालियां
कैद महलों में सबकी कमाई न हो

कोई अपनी खुशी के लिए गैर की
रोटियाँ छीन ले हम नहीं चाहते
छींन कर थोड़ा चारा कोई उम्र की
हर खुशी बीन ले हम नहीं चाहते
हो किसी के लिए मखमली बिस्तरा
और किसी के लिए एक चटाई न हो

अब तमन्नाएं फिर न करे खुदकुशी
ख़्वाब पर खौफ़ की चौकसी न रहे
श्रम के पांवों में हों न पड़ी बेड़ियाँ
शक्ति की पीठ अब ज़्यादती न सहे
दम न तोड़े कहीं भूख से बचपन
रोटियों के लिए फिर लड़ाई न हो

बह रहा है लहू बेकसूरों का क्यों
जल रहीं बस्तियां फिर गरीबों की क्यों
धर्म के नाम पर हो रहे कत्ल क्यों
जल रहा देश नफ़रत की आग में क्यों
फिर कभी खून सस्ता न हो गैर का
धर्म के नाम पर फिर लड़ाई न हो।
इसलिए राह संघर्ष की हम चुनें।
इसलिये....

- वशिष्ठ अनूप

फ्रांस की क्रांति और महिलाओं का संघर्ष

आशाः जिस परिस्थिति में क्रांति की शुरूआत हुई, वह आज हमें विस्तार से बतायेंगी ना?

एकताः जरूर। जैसा कि हमने कल फ्रांस के बारे में देखा था, एक तरफ राजाओं का वैभव-विलास, अशक्ति और आम जनता की विकट गरीबी थी तो दूसरी ओर वाल्येटर, रूसो, मोन्टेसे जैसे विचारकों का प्रभाव और अर्थव्यवस्था में मध्यम वर्ग का बढ़ता महत्त्व था। ऐसे वातावरण के बीच फ्रांस में लुई १६वां १७७४ में गद्दी पर बैठा। उसे और उसकी रानी आंत्वानंत दोनों को आम जनता से नफरत थी। इसी दौरान इंग्लैंड के साथ सात वर्षीय युद्ध में फ्रांस की पराजय हुई और फ्रांस की सरकार कर्ज में डूब गई। राज दरबार की प्रतिष्ठा बनाये रखने और कर्ज चुकाने के लिए पैसा कहां से लाया जाए? अमीर-उमरावों और पादरियों के दो उच्च वर्ग तो विशिष्ट अधिकार भोग रहे थे और वे कर नहीं देते थे। बाकी बचे तीसरे-स्तर वाले सामान्य नागरिक। अतः इस समस्या के समाधान के लिए राजा ने १७८९ में वर्साई में देश के तीनों वर्गों के प्रतिनिधियों की सभा बुलाने का ऐलान किया। १७५ वर्षों में पहली बार तीनों वर्गों के प्रतिनिधि इस सभा में मिलने वाले थे। इस सभा का ऐलान होने से फ्रांस में सार्वजनिक चर्चाओं का बवंडर मच गया। तीनों वर्गों के प्रतिनिधियों समेत सभी समूहों को अपेक्षा थी कि इस सभा में वे अपनी समस्याएं पेश करेंगे। इस प्रकार प्रत्येक समूह अपनी-अपनी समस्याओं की अर्जी तैयार करने लगा।

रेशमाः तो क्या महिलाओं ने भी अपनी समस्या इसमें प्रस्तुत करने की बात सोची थी?

एकता: इस सभा में महिलाओं को अपने प्रश्न प्रस्तुत करने या अपने प्रतिनिधि भेजने का निमंत्रण तक नहीं मिला था। इसके बावजूद कई महिलाओं ने महिला-शिक्षण, संपत्ति पर अधिकार जैसी समस्याओं को लेकर अर्जियां भेजीं।

इस सभा में तीनों वर्ग के प्रतिनिधियों ने एक होकर मांग की कि उनकी सहमति के बिना कोई नया कर न लादा जाए। यह सुनकर राजा लुई ने उन्हें सभा से बाहर कर दिया, परंतु लोग तितर-बितर होने की बजाय पास वाले टेनिस मैदान में इकट्ठे हुए और यह प्रतिज्ञा की कि 'जब तक राज्य का नया संविधान नहीं बनेगा तब तक लड़ेंगे'। इसे 'टेनिस कोर्ट' प्रतिज्ञा के रूप में जाना जाता है।

रेशमा: तो क्या राजा ने इन्हें वहां इकट्ठा होने से नहीं रोका?

एकता: कोशिश जरूर की पर वो नाकाम रहा। राजा ने अपने सैनिकों को इन लोगों पर बल प्रयोग करने का हुक्म दिया, परंतु सैनिकों ने उसकी आज्ञा नहीं मानी और निर्दोष लोगों पर जुल्म ढाने से इन्कार कर दिया। इस पर राजा ने उन लोगों पर दबाव डालने के लिए विदेश से सेना लाने की पैरवी की तो जनता भड़क उठी। १४ जुलाई १७८९ को पेरिस के लोग उठे और पेरिस के मध्य स्थित बस्तिय जेल पर धावा बोल दिया। लोगों को जानकारी मिली थी कि बास्तिय किले की जेल में अनेक राजनीतिक कैदी बन्दी हैं और लोगों की क्रांति को कुचल डालने के लिए वहां हथियार भी इकट्ठा किये गये हैं। इससे लोगों का आक्रोश आसमान पर जा पहुंचा। उन्होंने हथियार लेकर किले पर हमला किया और कैदियों को जेल से छुड़ा लिया। सामंत युग के दमन के पतन की यह शुरूआत थी। उसके बाद टेनिस कोर्ट में एकत्रित प्रतिनिधियों की बनी हुई क्रांतिकारी राष्ट्र सभा ने सत्ता हाथ में ली। यद्यपि संवैधानिक राजशाही के द्वारा राजा की मर्यादित सत्ता को चालू रखा। फ्रांस में १४ जुलाई का स्मरणीय दिवस आज भी राष्ट्रीय त्यौहार के रूप में मनाया जाता है।

शकरी: बंधुआ किसानों और खेतीहर मजदूरों का क्या हुआ?

एकता: क्रांति की यह आग देखते-देखते पूरे फ्रांस में फैलने लगी और हर गांव में किसान, सामंतों के अन्यायी शोषण और परंपरागत कानूनों को मानने से इन्कार करने लगे। इस क्रांति की आग को रोकने के लिए प्रथम स्तर (वर्ग) वाले सामंत और द्वितीय स्तर वाले पादरी अपने अधिकार छोड़ने को मजबूर हो गए। लोगों की प्रतिनिधि क्रांतिकारी राष्ट्रसभा (नेशनल एसेम्बली) ने अगस्त के अंत तक 'मानवीय अधिकारों का घोषणा पत्र' प्रकाशित किया। उसमें यह घोषणा की गई थी कि 'मनुष्य समान अधिकारों की स्वतंत्रता के साथ जन्मता है और उसी के साथ जीता है'। कानून की दृष्टि से सब को समानता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कानूनी प्रक्रिया के बिना किसी को सजा नहीं हो सकती, आदि मूलभूत अधिकारों को इस घोषणा पत्र में शामिल किया गया। इस क्रांति का नारा 'स्वतंत्रता, समानता, और बंधुत्व' था।

कमला: यदि कानून की नजर से सब समान हैं तब तो महिलाओं को नागरिक के रूप में समान अधिकार मिल गये होंगे?

एकता: हकीकत में फ्रांस की महिलाओं ने इस क्रांति में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी और आगे भी उन्हें योगदान देना था। फिर भी आबादी का आधा हिस्सा, महिलाओं को मनुष्य और नागरिक के रूप में इन अधिकारों से नितांत सहज रूप में वंचित रखा गया था!

आगे कहूं तो क्रांतिकारी राष्ट्र सभा ने स्वतंत्रता की घोषणा तो कर दी, लेकिन राजा ने उसे मंजूर करने से इन्कार कर दिया। दिनोंदिन आर्थिक संकट गहराता जा रहा था। ब्रेड के भाव आसमान छूने लगे थे। परंतु राजा और उसका परिवार लोगों की यातनाओं से दूर वर्साई के भव्य महल में अपने दरबारियों के साथ मौज-मस्ती कर रहा था। पेरिस की मेहनतकश महिलाओं को यह सहन नहीं हुआ और राजा को भूख से पीड़ित लोगों की दशा का भान कराने के लिए पेरिस से महिलाओं की एक टोली वर्साई की तरफ निकल पड़ी। भारी वर्षा में १२ मील की दूरी पैदल तय करने निकली इन महिलाओं की टोली की अगुवाई में धीरे-धीरे हजारों स्त्रियां और पुरुष शामिल होने लगे। वर्साई

पहुंचने पर राजा की तरफ से कोई सही उत्तर न मिलने पर आक्रोश से बिफरे और बेकाबू इस काफिले ने राजा के दो संरक्षकों की हत्या कर दी। इस घटना से राजा डर गया और अपने परिवार के साथ पेरिस आने पर मजबूर हो गया।

रेशमा: इन महिलाओं ने निडर होकर राजा को सही परिस्थिति का भान कराया, इसके बदले में क्रांति के अगुवाओं द्वारा उनको क्या मिला?

एकता: राष्ट्रसभा ने १७९१ में फ्रांस का नया संविधान बना दिया। इस संविधान में सामंतों के विशेषाधिकारों को समाप्त किया गया। राजा का कर्ज चुकाने के लिए कैथलीक चर्च की सम्पत्ति जब्त कर ली गई और ज्यू एवं अन्य धार्मिक अल्पसंख्यकों को भी पूर्ण नागरिक के सभी अधिकार दिये गए, परंतु महिलाओं को मताधिकार से वंचित रखा गया।

नीरू: अरे रे! यह तो कुल्हड़ में गुड़ फोड़ना हुआ।

आशा: मुझे तो लगता है कि औरतों ने इतना संघर्ष किया ही क्यों?

फरजाना: अरे! अपने बच्चों और परिवार के लिए।

एकता: सही बात, औरतें जब भी रास्ते पर निकलती हैं तब सिर्फ अपने बारे में ही नहीं सोचती हैं। अपने परिवार और समग्र समाज के लिए संघर्ष की राह चुनती हैं। लेकिन फिर उससे आगे भी जाती हैं। क्रांति के दौरान महिलाओं ने अपनी ताकत महसूस की। नागरिकता का अधिकार पाने के लिए वे लड़ रही थीं। इसके लिए महिलाओं ने अपने राजनीतिक क्लबों की स्थापना की। 'सोश्यल सर्कल' नामक समूहों में साथ मिलकर महिलाओं के अधिकारों के लिए उन्होंने संघर्ष शुरू किया। एटा पाल्म डी' एल्डर्स नामक डच महिला ने उसमें अग्रणी भूमिका अदा की। उसने शिक्षण, विवाह, तलाक, सम्पत्ति में महिलाओं को समान अधिकार की मांग की। परंतु पुरुष क्रांतिकारियों को यह बात पसंद नहीं आई। जब महिलाओं की संस्था 'सोसायटी फॉर रिवोल्यूशनरी रिपब्लिकन वीमेन' द्वारा महिलाओं के अधिकारों के अलावे खाने के सामान की तंगी, महंगाई जैसे मुद्दे उठाये गये तो १७८३ में नयी सरकार ने महिलाओं के इन समूहों को गैर-कानूनी घोषित कर दिया।

१७९३ में महिलाओं का एक दल राष्ट्रीय सभा में कीमतों की वृद्धि के खिलाफ अनुरोध करने गया तो नेताओं ने बताया कि परिषद दो दिनों के लिए स्थगित रखी गई है, शिकायत की सुनवाई दो दिनों बाद होगी। तब महिलाओं ने उनसे कहा 'जब हमारे बच्चे दूध मांगते हैं तो हम उनकी मांग को दो दिनों के लिए स्थगित नहीं कर देतीं'। १७९५ में फिर से एक बार खाने की तंगी के लिए शिकायत करने बड़ी तादाद में महिलाएं राष्ट्रीय परिषद में गईं तो उनकी बात किसी ने भी नहीं सुनी। इस परिस्थिति से हताश और उत्तेजित महिलाओं ने एक सदस्य की हत्या भी कर डाली। सरकार ने परिस्थिति का लाभ उठाते हुए तत्काल महिलाओं के मीटिंग स्थल में प्रवेश करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

कमला: मताधिकार तो नहीं दिया, पर अपनी समस्याएं प्रस्तुत करने का अधिकार भी ले लिया?

शकरी: और अपना संगठन बनाने की भी छूट नहीं!

एकता: इससे भी कई ज्यादा बलिदान अनेक महिलाओं को देना पड़ा था। उन सभी संघर्षशील महिलाओं की बात तो हम कर नहीं सकते, परंतु ओलिंपी डी गोजीस की चर्चा नहीं करें तो फ्रांस की क्रांति की बात अधूरी ही रह जायेगी। क्योंकि महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों के लिए सबसे अधिक धारदार प्रस्तुति उन्होंने ही की थी। ओलिंपी एक लेखिका थीं और उन्होंने गुलामी प्रथा के खिलाफ फ्रेंच भाषा में पहला नाटक १७८२ में लिखा था।

क्रांतिकारी राष्ट्रसभा (नेशनल एसेंबली) द्वारा प्रकाशित 'मानवीय अधिकारों का घोषणापत्र' के समकक्ष उसने १७९१ में 'महिलाओं के अधिकारों का घोषणा पत्र' (डेक्लेरेशन ऑफ द राइटस् ऑफ विमेन) प्रकाशित किया था, जिसे महिलाओं के आत्मनिर्णय के अधिकारों का प्रथम दस्तावेज भी कहा जाता है।

क्रांति के पश्चात, महिलाओं को नागरिक अधिकारों से वंचित रखा गया तब उन्होंने लिखा 'गुलाम पुरुष ने अपनी बेड़ियां तोड़ने के लिए अपनी ताकत बढ़ाई है और तुम्हारी ताकत का भी उपयोग किया है। परंतु मुक्त होने के पश्चात वह अपनी साथी

स्त्री के साथ अन्याय कर रहा है। ओ स्त्रियों! ओ स्त्रियों! तुम अंधेपन से बाहर कब निकलोगी? इस क्रांति से तुम्हें क्या फायदा हुआ?'

फरजाना: बिल्कुल सच्ची बात....

एकता: लेकिन यह सच्ची बात कहने की कीमत उन्हें अपने जीवन का बलिदान देकर चुकानी पड़ी। ३ नवंबर १७९३ को उसे जिलेटिन पर चढ़ा कर मृत्युदंड की सजा दे दी गई, क्योंकि उसने ऐसी मांग की थी कि फ्रांस की भावी सरकार का गठन अपने को क्रांतिकारी मानने वाली राष्ट्रीय सभा द्वारा नहीं, वरन् महिलाओं समेत तमाम लोगों के मत (रेफरेंडम) द्वारा होना चाहिए। ओलिंपी सहित कई अन्य क्रांतिकारी महिलाओं को मृत्यु दंड देने के बाद अन्य महिलाओं को खुले आम धमकी दी जाती थी कि अगर वे राजनीति में पड़ेंगी तो उनका भी वही हाल होगा। एक विरोधाभासी हकीकत यह है कि बड़ी तादाद में महिलाएं क्रांति से जुड़ीं, उन्होंने क्रांति की अगुआई की और अनेक बलिदान दिये फिर भी फ्रांस में महिलाओं को राजनीतिक अधिकार नहीं मिले। परंतु फ्रांस की क्रांति के अधिकांश प्रतीकों को स्त्री के रूप में दर्शाया गया।

नीरू: क्या मतलब?

एकता: फ्रांस की क्रांति ने जिन विचारों, शब्दों का उपयोग किया व जो क्रांति के प्रतीक बने, वे शब्द थे - स्वतंत्रता (लिबर्टी), समानता (इक्वालिटी), तर्क (रीजन) आदि। क्रांति के विचार दर्शाने वाले ये शब्द फ्रेंच भाषा में स्त्री लिंग हैं और इन विचारों के प्रतीक के चित्र रूप में महिलाएं दर्शाई गई हैं। परंतु इन महिलाओं का पहनावा फ्रांस की महिलाओं से अलग रोमन या ग्रीक देवियों के वस्त्रों जैसा दिखाया गया। अतः उनके प्रतीकों में स्त्री शरीर का उपयोग किया गया, परंतु वह हाड़-मांस की वास्तविक स्त्री नहीं, मात्र एक प्रतीक थी।

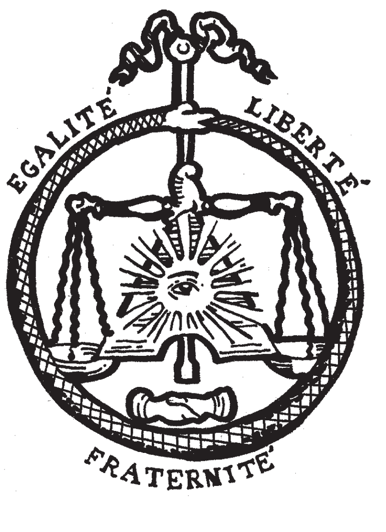

इस प्रकार फ्रांस की क्रांति जिसने दुनिया भर के सामान्य लोगों को प्रेरणा दी, नये विचार दिये और सामान्य श्रम जीवियों के अधिकारों तथा उनकी सामूहिक शक्ति के दर्शन कराये, उसने

महिलाओं को मात्र एक काल्पनिक प्रतीक बनाकर संतोष कर लिया।

आशाः यह तो अपने देश जैसा ही हुआ। जो एक तरफ स्त्री को देवी बनाकर उसकी पूजा करता है, जब तक वो पत्थर की मूर्ति बनी रहे। लेकिन जीती जागती स्त्री को तो दासी की तरह ही रखता है।

रेशमाः तो आखिर फ्रांस में महिलाओं को मताधिकार कब मिला?

एकताः वास्तविकता यह है कि फ्रांस की तमाम महिलाओं को नागरिक के रूप में मताधिकार पाने हेतु १९४४ तक इंतजार करना पड़ा था।

कमलाः पर ओलिंपी द्वारा लिखे गये 'महिलाओं के अधिकारों के घोषणा पत्र' का क्या हुआ? क्या उसके विचारों को कोई आगे नहीं ले गया?

एकताः फ्रांस की महिलाओं के संघर्ष से भले ही उनको मताधिकार न मिल पाया, पर समग्र यूरोप में महिलाओं के सवाल चर्चा के केन्द्र में आ गये थे और आगे के नारी समानता के संघर्ष में वे प्रेरणा स्वरूप बने। ओलिंपी द्वारा लिखा हुआ घोषणा पत्र काफी समय तक इतिहास में विलीन हो गया था लेकिन उसके एक वर्ष पश्चात, १७९२ में 'मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट' के द्वारा लिखी पुस्तक 'नारीवाद के प्रथम घोषणा पत्र' के रूप में इतिहास में विख्यात हुई।

फरजानाः उसके बारे में भी हमें बताओ ना!

शकरीः आज के लिए इतना काफी है। इसके बारे में हम कल बात करेंगे।

संघर्ष जारी है...

एकता: **मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट** (१७५९-१७८७) को अपनी पुस्तक 'ए विन्डीकेशन ऑफ द राइट्स ऑफ विमेन (१७९२)', द्वारा ख्याति प्राप्त हुई। उसकी यह पुस्तक नारीवाद के प्रथम घोषणा पत्र के रूप में विख्यात हुई। नारी के अधिकारों का घोषणा पत्र लिखने से पहले ही वह एक लेखिका के रूप में ख्याति पा चुकी थी और यूरोप के क्रांतिकारी समुदाय में जानी मानी थी। वह इंग्लैंड और फ्रांस के क्रांतिकारियों से मिल चुकी थी। वैसे इससे पहले भी नारी शिक्षा, उनकी नागरिकता के अधिकारों, उनके आर्थिक स्वातंत्र्य के बारे में अनेक महिलाएं अपने विचार व्यक्त कर चुकी

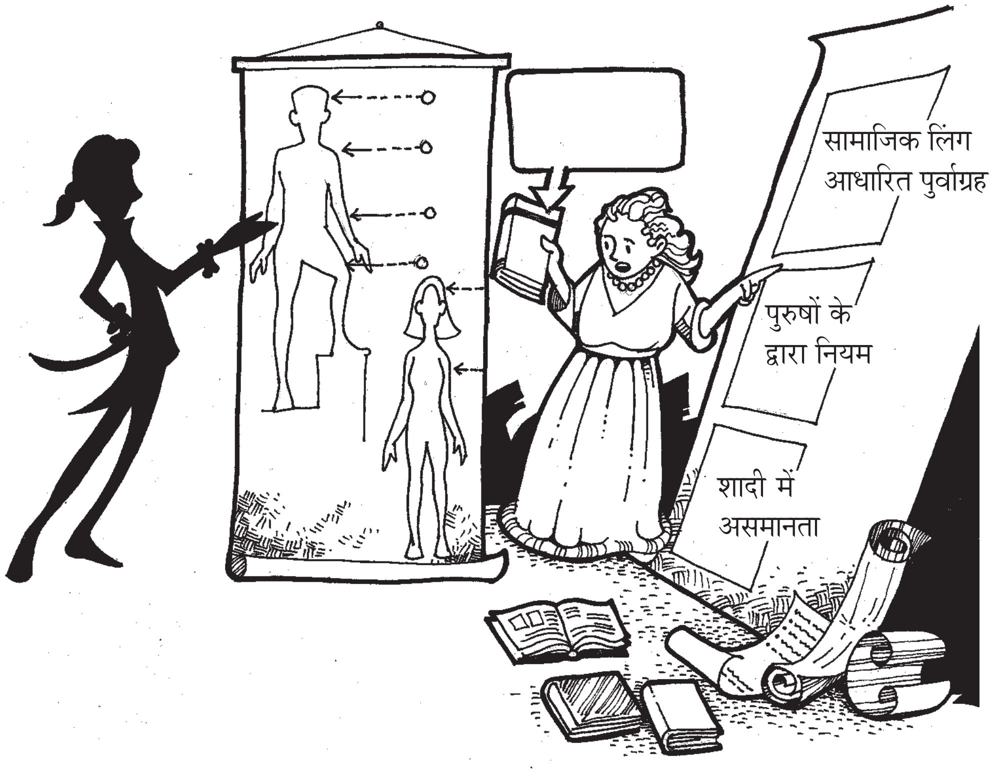

थीं, परंतु इतिहास में मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट को जो स्थान मिला वह उन्हें नहीं मिला।

उससे पहले कई स्त्रियों ने तर्क का उपयोग करके यह कहा था कि स्त्री और पुरुष के बीच की असमानता शिक्षण व प्रशिक्षण के कारण खड़ी होती है। यह स्त्री और पुरुष की शारीरिक असमानता के कारण नहीं है, परन्तु मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट का खास योगदान यह रहा कि उन्होंने ये समझाया कि स्त्री-पुरुष के बीच की असमानता के नियम पुरुषों ने बनाये हैं। उन्होंने नियम बनाने की पुरुषों की सत्ता का विरोध किया। विवाह-संस्था का आर्थिक विश्लेषण करते हुए उन्होंने कहा कि विवाह द्वारा स्त्री भरण-पोषण के बदले में स्वयं को और अपनी सेवाओं को पुरुष के हाथों बेचती है। यह वेश्यावृत्ति का एक प्रकार का कानूनन स्वरूप है, क्योंकि वेश्या भी अपने जीवन निर्वाह के लिए अपना शरीर बेचती है। उन्होंने पुरुष-प्रधान व्यवस्था के वैचारिक तंत्र के प्रभाव में आये बगैर इन संस्थाओं का अपनी बौद्धिक प्रतिभा से पर्दाफाश किया। उस समय उनकी पुस्तकों ने लोगों का बहुत ध्यान आकृष्ट किया। परंतु उसके बाद के काल में उनको भुला दिया गया। उनके विचारों को जब तर्क या वाद-विवाद से गलत सिद्ध नहीं किया जा सका तब नारीवाद के विरोधियों ने हमेशा की भांति उनके चरित्र पर कीचड़ उछाला, उसे गालियां दी और उनके विचारों को विकृत करके प्रस्तुत करते हुए अपमानित करने की कोशिश की, परंतु नारीवादी संघर्ष आगे बढ़ने पर फिर से एक बार उनके विचारों को ढूंढकर सामने प्रस्तुत किया गया। इसी तरह **जॉन स्टुअर्ट मिल** (१८०६-१८७३) एक उदारवादी विचारक थे। उनकी पुस्तक द सब्जेक्शन ऑफ विमेन (१८७३) महिलाओं के अधिकारों हेतु उदारवादी विचारों की दृष्टि से यूरोप में ही नहीं, पूरी दुनिया में विख्यात हुई। उन्होंने कहा था कि अगर महिलाओं को मताधिकार मिलेगा तो सम्पूर्ण समाज लाभान्वित होगा।

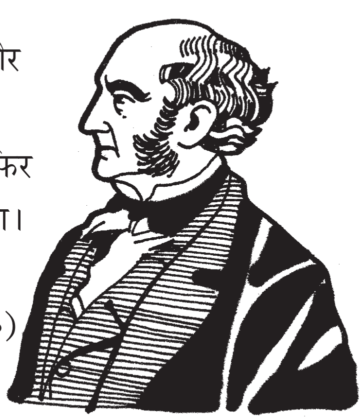

इस प्रकार अनेक संघर्षों के बाद उस समय यूरोप-अमेरिका में सामंतवादी व्यवस्था की जगह पूंजीवादी लोकतंत्र व्यवस्था स्थापित हुई।

शकरी: लेकिन पूंजीवाद में भी मजदूरों का कितना अधिक शोषण होता था। क्या इसके खिलाफ कोई आवाज नहीं उठी?

एकता: पूंजीवादी व्यवस्था में होने वाले मजदूरों के शोषण के खिलाफ अलग अलग तरीके से आवाज़ उठाई गई जिसमें, आदर्शवादी समाजवादियों का (यूटोपियन, सोश्यालिस्ट्स), सहकारी आंदोलनों का तथा समाजवादी आंदोलन का तथा उनके विचारों का नारीवादी आंदोलन पर बहुत गहरा असर पड़ा। इन सभी प्रकार के आंदोलनों में स्त्रियां सम्मिलित हुईं और अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें से कुछेक विचारकों के बारे में मैं तुम्हें बताऊंगी।

ऐसे ही एक विचारक थे **सेंट साइमन** (१७६०-१८२५)। उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की जो उद्योगों पर आधारित हो पर उसमें उत्पादन न करने वाले उमरावों, सेना और धर्मगुरुओं के बजाय उत्पादन करने वाले श्रमजीवी, वैज्ञानिकों, व्यापारियों की सत्ता हो। उसमें मालिक और मजदूर के दो वर्ग न हों। इस समाज में स्त्री और पुरुष भी समान हों। उन्होंने स्त्री-पैगंबर की भी कल्पना की जो महिलाओं और मानव समाज को मुक्ति की तरफ ले जाए। उनकी इस विचारधारा के साथ अनेक स्त्रियां जुड़ीं। इन महिलाओं ने अपना अखबार भी निकाला। इसे शुरू करने वाली महिलाएं, **देसीरी वेरेट** और **रिनि हिंडोर्फ** मजदूर वर्ग की थीं। इस तरह इस विचारधारा में महिलाओं के अधिकारों और श्रमजीवियों के अधिकारों के बीच संबंध देखने को मिलता है।

रोबर्ट ओवन (१७७१-१८५८) नामक एक विख्यात विचारक ने सहकार का सिद्धांत विकसित किया। वे खुद फैक्ट्री के मालिक थे लेकिन मजदूरों के शोषण से व्यथित होकर उन्होंने स्कॉटलैंड में न्यू लानार्क में सहकारी स्तर पर बस्ती बसाई। सहकार आंदोलन में अनेक महिलाओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। उनमें से एक थी **अन्ना व्हीलर** (१७८५-१८१८) जो आयरलैंड के एक परिवार में जन्मी थीं। १८१२ में वे अपने शराबी पति से अलग हुई और फ्रांस आईं, जहां वे समाजवादियों और स्त्री-मुक्ति-समर्थकों के सम्पर्क में आईं। वे सहकार के सिद्धांतकार रोबर्ट ओवन से प्रभावित थीं। **थोम्प्सन** के साथ मिलकर उन्होंने इस विचार को आगे बढ़ाया। उसके साथ उन्होंने **'अपील ऑफ वन हाफ ऑफ द ह्यूमन रेस,**

विमन, अगेन्स्ट द प्रिटेन्शन ऑफ द अदर हाफ, मेन' नामक पुस्तक लिखी।

इस पुस्तक में महिलाओं पर पुरुषों की सत्ता की तुलना राजनेता, सामंत या पूंजीपति की श्रमजीवियों पर सत्ता एवं शोषण से की तथा महिलाओं को स्वयं की मुक्ति के लिए सक्रिय बनने हेतु आह्वान किया। उन्होंने कहा कि, 'स्त्रियां पुरुषों द्वारा बनाये कृत्रिम पिंजरे में कैद हैं।'

थोम्पसन ने कहा था कि 'अगर सरकार का उद्देश्य नागरिकों को अधिक से अधिक सुख दिलाना है तो उसे महिलाओं की ओर उतना ही ध्यान देना चाहिए, जितना पुरुषों की तरफ दिया जाता है। महिलाओं को भी अपने लिए और अपने ढंग से सुख प्राप्त करने का उतना ही अधिकार है जितना पुरुषों को है।

आशा: मतलब ये विचारक मात्र विचार करके ही बैठे नहीं रहे, बल्कि अपनी कल्पना का समाज स्थापित करने के लिए इन्होंने प्रयास भी किए।

एकताः हां, इन आदर्शवादी समाजवादियों ने एक आदर्श दुनिया का सपना देखा और छोटी-छोटी बस्तियां बसाकर उसे अमल में लाने के प्रयत्न भी किये, परंतु उससे समग्र समाज की दशा नहीं बदली। उनके उभरने से नये विचारों का मंथन हुआ पर आखिरकार पूंजीवादी समाज के समुद्र में उनके विचारों की बस्तियां डगमगाती नौका की तरह कुछ समय चल कर डूब गई। पूंजीवादी सागर का शोषण वैसा का वैसा रहा।

रेशमाः तो क्या इसका यह अर्थ हुआ कि पूंजीवादी व्यवस्था नही बदल सकते हैं?

एकताः नहीं। ऐसा नहीं है, पर समाज को बदलने के लिए उसे समझना पड़ता है, और यह काम **कार्ल मार्क्स** (१८१८-१८८३) ने किया। मार्क्स विचारक से ज्यादा क्रांतिकारी के रूप में जाने जाते हैं। लेखों और विचारों के द्वारा आधुनिक विश्व के निर्माण में और समानता के संघर्ष में अपने मित्र **फ्रेडरिक एंगल्स** (१८२०-१८९५) के साथ मिलकर उन्होंने बड़ी भूमिका निभाई, ऐसा कहा जा सकता है। मार्क्स ने पूंजीवादी समाज व्यवस्था जिस तरह

काम करती है, उसे समझने के लिए पहले की तमाम सामाजिक-व्यवस्थाओं का अध्ययन किया और कुछ नियम निकाले जिनके अनुसार समाज में बदलाव आता है। अपनी पुस्तक 'पूंजी'(दास कैपिटल) में उन्होंने कहा कि इतिहास की किताबें राजा-महाराजाओं के युद्धों से भरी हैं, पर वह समाज परिवर्तन का इतिहास नहीं है। समाज में परिवर्तन जिस तरह आता है, उसे समझने के लिए उत्पादन के साधन के मालिक वर्ग और समाज के लिए उत्पादन करने वाले मजदूर वर्ग के बीच के संबंधों, संघर्षों और उनमें कैसे परिवर्तन आता है, उसे समझना पड़ेगा। पूंजीवादी शोषण को दूर करने के लिए पूंजीवाद में उत्पादन करने वाले मजदूर वर्ग को संगठित करके पूंजी अर्थात् कारखानों, उद्योगों, खानों, खेतों पर मुट्ठी भर लोगों का स्वामित्व दूर करके उन पर सारे समाज के स्वामित्व वाली व्यवस्था लानी होगी। हरेक को अपनी शक्ति और क्षमता के अनुसार काम मिलना चाहिए और जरूरत मुताबिक रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा और स्वास्थ्य की सभी सुविधाएं मिलनी चाहिए।

कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगल्स ने १८४८ में 'साम्यवाद का घोषणा पत्र' प्रकाशित किया। उसमे बताया कि "दुनिया भर के मजदूरों, एक हो जाओ, तुम्हें शोषण की बेड़ियों के सिवा कुछ भी खोना नहीं होगा।" उन्होंने मजदूरों के अंतर्राष्ट्रीय संगठन की भी स्थापना की।

नीरू: महिलाओं के लिए उन्होंने कुछ कहा क्या?

कमला: या फिर दूसरे विचारकों की तरह महिलाओं को निम्न ही माना?

एकता: मार्क्स का पूरा ध्यान पूंजीवादी व्यवस्था को समझने में लगा था, परंतु उनके साथी और मित्र फ्रेडरिक एंगल्स द्वारा १८८४ में लिखी पुस्तक **'परिवार व्यवस्था, निजी सम्पत्ति और राज्य'** का महिलाओं के आंदोलन पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। उन्होंने परिवार व्यवस्था का विश्लेषण करके बताया कि हमारी परिवार व्यवस्था में स्त्री को पुरुष पर आधारित रखा गया है। जिस तरह पूंजीपति, मजदूर के शोषण पर निर्भर रहता है, उसी तरह स्त्री के शोषण पर परिवार निर्भर करता है। उससे फायदा किसको होता है? मात्र पुरुष को? नहीं, सम्पूर्ण पूंजीवादी व्यवस्था को। कारण

यह कि कारखाने में मजदूरी करके थके-थकाये घर आये पुरुष को अगले दिन काम पर जाने के लिए तमाम सुविधायें स्त्री बिना-वेतन घर में काम करके प्रदान करती है। इतना ही नहीं, बच्चों को जन्म देकर, पाल-पोषकर भविष्य में काम करने वाले श्रमजीवी भी वही तैयार करती है, और यह सब वह बिना वेतन करती है।

इसके अलावा जब परिवार या समाज को जरूरत पड़ती है तब कम वेतन पर उत्पादन कार्य में जुट जाती है। अगर घर के काम के लिए उसे पैसा चुकाना पड़ा होता तो पूंजीपतियों को पुरुष मजदूरों को कहीं ज्यादा वेतन देना पड़ता। इस तरह स्त्री दुगुने शोषण की शिकार बनती है। मार्क्स, एंगल्स और उनके विचारों को आगे ले जाने वाले साम्यवादी कार्यकर्ता जैसे - एलेकजेन्ड्रा कोलोन्ताई, रोज़ा लकज़म्बर्ग, क्लेरा जेटकीन आदि ने नारी समानता के अभियान में अपना योगदान दिया था।

कमला: क्लेरा जेटकीन? जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस की घोषणा की थी वो तो नहीं?

एकता: आपने ठीक समझा है, मैं उन्हीं की बात कर रही हूँ।

नीरू: अच्छा हम जो महिला दिवस मनाते हैं, उसकी शुरूआत इसी बहिन ने की थी।

फरजाना: तब तो हमें उनकी बातें भी बताओ।

एकता: उनकी बात तो हम करेंगे ही। हमारे इतिहास की इन गौरवशाली बातों को जाने बिना कैसे चलेगा? परंतु उससे पहले हम मताधिकार की लड़ाई की बात पूरी करेंगे।

आशा: हां आप... आप अमेरिका की क्रांति की बात बताने वाली थी ना, वह तो रह ही गई।

शकरी: हां, और गुलामों की मुक्ति की बात भी बताने वाली थीं।

एकता: जरूर, उसके बारे में हम कल बात करेंगे लेकिन आज की चर्चा हम उस अंतर्राष्ट्रीय गीत से पूरी करेंगे जो दुनिया के तमाम देश के मजदूर गाते हैं। दुनिया की सभी मुख्य भाषाओं में इसका अनुवाद किया गया है।

अंतराष्ट्रीय गीत
उठ जाग भूखे बंदी, अब खींच लाल तलवार
कब तक सहोगे साथी, जालिम का अत्याचार
तुम्हारे रक्त से रंजित क्रंदन, अब दसों दिशा लाल रंग
ये सौ बरस के बंधन, एक साथ करेंगे भंग
ये अंतिम जंग है जिसको, जीतेंगे हम एक साथ
गाओ इन्टरनेशनल, नव स्वतंत्रता का गान

अमेरिका में नारी अधिकार और गुलामों की मुक्ति हेतु संघर्ष

एकता: फ्रांस की महिलाओं का संघर्ष सामाजिक क्रांति के साथ जुड़ा हुआ है तो अमेरिकी महिलाओं का संघर्ष गुलामों के मुक्ति-संघर्ष के साथ जुड़ा है। उसके बारे में तुम लोगों को तीन महिलाओं के जीवन गाथा के द्वारा बताऊंगी।

शकरी: अमेरिका में गुलामी की प्रथा कैसे आई?

एकता: उत्तरी अमेरिका एक नया खोजा हुआ भू-भाग था। उसके किनारे पर इंग्लैंड से आये लोगों ने अपनी बस्तियां बसा ली थीं। परंतु उसके भीतरी भाग के विशाल प्रदेशों में तंबाकू और अन्य चीजों के बड़े-बड़े खेतों में काम करने के लिए मजदूरों की जरूरत थी। इसके लिए १७वीं सदी से १९वीं सदी तक अफ्रीका से हब्शी लोगों को जानवरों की तरह पकड़कर लाने और उनको बेचने का व्यापार यूरोप-अमेरिका में चलता था। उन लोगों से खेतों और बागानों में गुलामों की तरह सभी तरह की मजदूरी करवाई जाती थी। उनके साथ मनुष्य जैसा नहीं वरन पशुवत व्यवहार किया जाता था। अमेरिकी स्वतंत्रता के आंदोलन के दौरान गुलामी उन्मूलन हेतु आवाजें उठी थी, परंतु 'स्वतंत्र अमेरिका' में उसके बाद सौ वर्षों तक गुलामी की प्रथा मौजूद रही थी।

रेशमा: मतलब, आज दुनिया के सबसे अधिक सम्पत्तिशाली माने-जाने वाले अमेरिका की सम्पत्ति की बुनियाद में गुलामों का खून-पसीना लगा था। लेकिन अमेरिका को स्वतंत्रता का युद्ध किसके खिलाफ लड़ना पड़ा था?

एकता: १७७५ से पहले अमेरिका इंग्लैंड का उपनिवेश था। इंग्लैंड से बसने आए लोगों ने शुरूआत में इंग्लैंड के राजा की सत्ता स्वीकार की थी। लेकिन धीरे-धीरे इंग्लैंड की सरकार ऐसे कदम

उठाने लगी जिससे अमेरिकी बस्तियों को नुकसान हो और इंग्लैंड के व्यापारियों को लाभ हो। ब्रिटिश साम्राज्य की स्वेच्छाचारिता के खिलाफ अमेरिका के लोगों ने स्वातंत्र्य युद्ध छेड़ दिया और १७७६ में अमेरिका की स्वतंत्रता का घोषणा-पत्र प्रकाशित किया। १७८१ में इस युद्ध का अंत हुआ और अमेरिका एक स्वतंत्र देश बना। गुलामों और औरतों ने भी स्वतंत्रता युद्ध में भाग लिया था। विशेष रूप से इंग्लैंड की बनी वस्तुओं के बहिष्कार और फौज की मदद में महिलाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। लेकिन स्वतंत्र होने के बाद महिलाओं और गुलामों को उनकी अपेक्षा के अनुसार मुक्ति या समानता नहीं मिली। १९वीं सदी में अमेरिकी महिलाओं की समानता और मताधिकार की लड़ाई अश्वेत (अफ्रीकी-अमेरिकी) प्रजा के गुलामी उन्मूलन की लड़ाई के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ी थी।

गुलामी उन्मूलन और महिलाओं के अधिकारों हेतु किये जाने वाले आंदोलन के कुछ महत्त्वपूर्ण नेताओं के बारे में बताती हूं। १८२० में शुरू हुए इस आंदोलन की सर्वप्रथम सेनानी फेनी राइट कही जा सकती हैं।

फेनी राइट (१७९५ से १८५२)

फेनी १७९५ में स्कॉटलैंड में जन्मी थीं। बचपन में ही पिता गुजर गये थे पर उनके लिए उत्तराधिकार के रूप में काफी सम्पत्ति छोड़ गये थे। अठारह वर्ष की उम्र में उन्होंने अपनी पहली पुस्तक लिखी और १८१८ में अमेरिका आईं। उनके विचार आज भी क्रांतिकारी लगते हैं। उन्होंने उस जमाने में तलाक के अधिकार व परिवार-नियोजन हेतु लिखा था। वे विवाह संस्था को एक अन्यायी व्यवस्था मानती थीं। उनकी मान्यता थी कि राज्य के द्वारा सबको समान शिक्षा मिलनी चाहिए। गुलामों की शिक्षा और अलग-अलग जाति के लोगों के बीच वैवाहिक संबंधों का उन्होंने समर्थन किया। मैने तुम्हें रॉबर्ट ओवन के बारे में बताया था, क्या वह याद है?

नीरूः मुझे तो ये सारे नाम याद ही नहीं रहते?

फरजानाः उनकी बातें तो याद रहती हैं न, तो ठीक है!

रेशमाः मुझे याद है, जिसने सहकारी आंदोलन शुरू किया था, वही ना?

एकताः हां, वही। रॉबर्ट ओवन के विचारों से प्रभावित होकर फेनी उनकी साथी बनी थी और उनके विचारों को क्रियान्वित करने के लिए 'नशोबा' नामक एक सामूहिक बस्ती स्थापित की थी। उनका सपना था कि इस बस्ती में अलग-अलग वंश के गोरे, काले तमाम लोग समानता से रहें। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति इस सामूहिक बस्ती के पीछे और लगभग तीस गुलामों को छुड़ाने पर खर्च कर डाली। लेकिन उस समय के स्थापित हितों की इसी में रुचि थी कि पूंजीवादी व्यवस्था के नियमों को चुनौती देने वाली यह बस्ती न चले। अतः उन लोगों ने यह आक्षेप लगाकर कि 'यह बस्ती विभिन्न जाति के लोगों के बीच वैवाहिक संबंधों को बढ़ावा देती है', इस सामूहिक बस्ती को नहीं चलने दिया। परंतु उनका संघर्ष जारी रहा। उनके जीवन और कार्यों में समाजवादी आंदोलन के अलावा महिलाओं के अधिकार और गुलामों की मुक्ति के आंदोलन का संगम देखने में आता है।

जीवन के अंतिम दिनों में उन्हें स्वास्थ्य को लेकर अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। उनकी मृत्यु के बाद उनकी इच्छानुसार कब्र पर नीचे लिखे वाक्य लिखवाये गयेः 'मैं मनुष्यों के उत्तम भविष्य के लिए विवाह-ग्रंथि से जुड़ी हूं.....उसके लिए मैंने अपनी सम्पत्ति, अपनी कीर्ति, आबरू और अपना जीवन समर्पित किया है।'

कमलाः वाह, कैसा प्रेरणादायी वाक्य है!

एकताः इस वाक्य में मानों उनके जीवन का निचोड़ आ गया। फेनी राइट द्वारा अमेरिका में शुरू किये गये इस अभियान को अन्य दो बहादुर महिलाओं - एलिजाबेथ केडी स्टेनटोन और ल्युक्रेशिया मोट ने आगे बढ़ाया।

फरजानाः उनके बारे में भी हमें बताओ!

एलिजाबेथ स्टेनटोन (१८१५ - १९०२)

एलिजाबेथ स्टेनटोन के पिता एक वकील थे। उन्होंने अपनी बेटी को बाल्यावस्था से ही कानून से परिचित कराया था। कानून के अध्ययन से एलिजाबेथ को ख्याल आया कि लगभग सारे कानून पुरुषों की तरफदारी करते हैं और विशेष रूप से विवाहित स्त्री को कोई अधिकार है ही नहीं। न उनको सम्पत्ति रखने का अधिकार है, न आमदनी प्राप्त करने का और न अपने बच्चों पर अधिकार है। इन अध्ययनों से एलिजाबेथ का मन महिलाओं के अधिकारों के प्रति संवेदनशील बना।

उस समय अन्य धनिकों की भांति उनके घर में भी एक गुलाम था - पीटर टिबोउट। एलिजाबेथ और उसकी बहन जब चर्च जातीं तो अन्य गोरे लोगों की तरह आगे जाकर बैठने की बजाय इस गुलाम के साथ पीछे ही बैठी रहतीं। उनके एक चचेरे भाई गुलामी उन्मूलन आंदोलन से जुड़े थे। उनके सम्पर्क से एलिजाबेथ गुलामों की दशा और उसकी समस्याओं से अधिक परिचित हुई और गुलामी उन्मूलन आंदोलन में शामिल हो गईं।

उन्हें अपने समय की महिलाओं से बहुत भिन्न रीति से पलने का अवसर मिला था। एक विख्यात शैक्षणिक संस्था में उन्होंने लैटिन, ग्रीक, गणित शास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया था। अपनी स्कूल के अन्य लड़कों की बजाय वे बहुत अच्छी तरह पास हुईं, अपनी बौद्धिक प्रतिभा सिद्ध की और अनेक पुरस्कार प्राप्त किये। लेकिन जब कॉलेज में जाने का मौका आया तब उससे कम प्रतिभाशाली लड़कों को भी उच्च शिक्षण की अच्छी संस्थाओं में प्रवेश मिला, पर ये कॉलेज सिर्फ लड़कों के लिए ही थे। अतः एलिजाबेथ को महिलाओं के कॉलेज में प्रवेश लेना पड़ा।

उन्होंने हेनरी स्टेनटोन से विवाह किया। विवाह के दौरान प्रतिज्ञा लेते समय परंपरागत रीति से 'पति की आज्ञा मानेगी' जैसे शब्द बोलने की बजाय उन्होंने कहा कि वह 'पति के साथ समानता का व्यवहार करेगी'।

आशाः कैसी अच्छी बात है। जब मेरा विवाह हुआ तब रीति-रिवाज के अनुसार पांच विवाहिता स्त्रियां आईं और मेरे कान में बोल गई, "अखंड सौभाग्यवती"! मेरे माता-पिता ने भी यही आशीर्वाद दिया, तब मेरे मन में विचार उठ रहा था कि इसका अर्थ तो यही हुआ न कि मेरे पति का जीवित होना ही मेरा सौभाग्य है। उस आशीर्वाद में मुझे लेकर कोई विचार नहीं किया गया था।

एकताः मुझे तो यह भी समझ में नहीं आता कि यह आशीर्वाद है या श्राप?

नीरूः ऐसा क्यों कहती हैं? आशीर्वाद ही कहा जाएगा ना!

एकताः मुझे तो श्राप ही लगता है, कारण कि इन शब्दों का सही अर्थ बहुत स्पष्ट शब्दों में कहूं तो माता-पिता अपनी बेटी से कहते हैं कि 'तेरे पति से पहले तेरी मृत्यु हो।'

शकरीः हां, सोचें, तब तो इसका ऐसा ही अर्थ होता है।

कमलाः लेकिन ऐसी कड़वी बात को हम कितने अच्छे शब्दों के आवरण पहना देते हैं?

फरजानाः अरे, यहां तक कि उसके बारे में बुरा विचार भी न आये!

एकताः एलिजाबेथ के जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना १८४० में घटी। उस वर्ष वे लंदन में आयोजित गुलामी विरोधी परिषद में गई थीं। वहां उनकी मुलाकात ल्युक्रेशिया मोट से हुई। ल्युक्रेशिया मोट अपने क्षेत्र की प्रतिनिधि थीं। परंतु सभा में जिस समूह का वर्चस्व था उसने बहुमत से निर्णय लिया कि स्त्रियां इस सभा की कार्यवाही में भाग नहीं ले सकतीं। उनको पुरुषों से अलग पर्दे के पीछे बैठना होगा।

एलिजाबेथ स्टेनटोन और ल्युक्रेशिया मोट दोनों ने साथ मिलकर इसका विरोध किया। गुलामी उन्मूलन संघर्ष के कई जाने-माने पुरुष नेता भी उनके साथ हो गये। लेकिन इस अनुभव से दोनों ने तय किया कि अब महिलाओं के अधिकार के लिए जबरदस्त आवाज उठनी ही चाहिए। दोनों ने मिलकर १८४८ में अमेरिका में महिलाओं के अधिकारों के लिए सर्वप्रथम परिषद बुलाई। इस प्रथम ऐतिहासिक परिषद में उन्होंने अमेरिका में 'स्वंतत्रता के घोषणा पत्र' (डेक्लेरेशन ऑफ इन्डिपेन्डन्स) के जैसा महिलाओं के अधिकार विषयक 'संवेदना का घोषणा पत्र' (डेक्लेरेशन ऑफ

सेन्टीमेन्ट्स) प्रसारित किया। उसमें उन्होंने लिखा कि 'यह एक स्वयं प्रकाशित सत्य है कि तमाम पुरुष और स्त्रियां जन्म से समान हैं।'

रेशमाः इस परिषद ने अमेरिकी महिलाओं को क्या संदेश दिया?

एकताः परिषद में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि 'इस देश में महिलाओं का यह दायित्व है कि वे अपने लिए पवित्र मताधिकार हासिल करें'।

१८५१ में वे सुसान वी. एंथोनी से मिलीं और उसके बाद उनकी मित्रता जीवन भर रही। १८६६ में उन्होंने **'अमेरिकन इक्वल राइट एसोशियेशन'** की स्थापना की। वे गुलामी उन्मूलन आंदोलन से जुड़ी हुई थीं और ऐसा मानती थीं कि रंगभेद व स्त्री-पुरुष के बीच के भेद मूलतः एक जैसे हैं। लेकिन उन्होंने देखा कि गृह युद्ध के पश्चात् गुलामी-उन्मूलन की बात आई, और संविधान में मात्र अफ्रीकी-अमेरिकी पुरुषों को मताधिकार देने हेतु ही संशोधन करने की घोषणा की गई। तब उन्होंने उसका विरोध किया और कहा कि इस संशोधन में महिलाओं का भी समावेश होना चाहिए। परंतु उसे स्वीकार नहीं किया गया। नागरिक अधिकारों के अनेक आंदोलन कर्ताओं का कहना था कि गोरी महिलाओं को उनके पति व पिता द्वारा परोक्ष रूप में अधिकार मिल चुके हैं, पर अफ्रीकी-अमेरिकी पुरुषों को ऐसे कोई अधिकार नहीं हैं, अतः पहले इन लोगों को ये अधिकार मिलने चाहिए। इस पर उन्होंने कहा कि अफ्रीकी-अमेरिकी महिलाओं का क्या? उनको तो रंगभेद, गुलामी और स्त्री-पुरुष

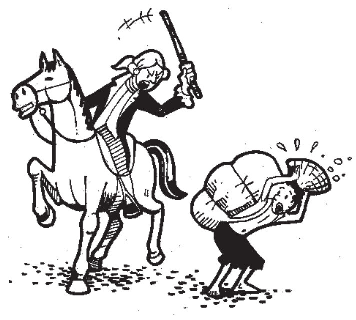

भेदभाव नामक तीन-तीन असमानताओं का सामना करना पड़ता है। उन्होंने सार्वत्रिक, वयस्क मताधिकार के सिवा दूसरे किसी प्रस्ताव को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया।

उसके बाद वाले वर्ष में उन्होंने अपना ध्यान मताधिकार के बदले महिलाओं के अन्य अधिकारों की तरफ दिया। उन्होंने बाईबल के लेखों का नारीवादी दृष्टि से विवेचता की और महिलाओं की बाईबल लिखी। वे धर्म पर आधारित असमानता को ललकारती हुई अलग-अलग जाति और वंश के विवाहों को समर्थन देती रही। १९०२ में अपनी मृत्यु तक वे महिलाओं के अधिकारों के लिए संघर्ष करती रहीं पर अपने जीवन काल के दौरान महिलाओं को मताधिकार मिलता नहीं देख सकीं।

रेशमा: जीवन भर एक ध्येय के लिए जीना कोई छोटी बात नहीं। पर ल्युक्रेशिया मोट की जिंदगी कैसी थी?

शकरी: हां, उसके बारे में भी बताओ न!

एकता: **ल्युक्रेशिया मोट (१७९३ - १८८०)** क्वेकर कुटुम्ब में जन्मी थी। १७वीं सदी के ईसाई चर्च की एकाकी सत्ता के विरुद्ध चुनौती के रूप में क्वेकर पंथ की शुरूआत की गई थी। जिसकी मुख्य मान्यता यह थी कि ईश्वर हर व्यक्ति में निवास करता है और हर व्यक्ति अंतरात्मा की आवाज के रूप में उसे सुन सकता है। अपनी अंतरात्मा की आवाज के अनुसार बर्ताव करने की हर एक को स्वतंत्रता है। इस पंथ के समूहों ने गुलामी उन्मूलन, महिलाओं के समान अधिकार और युद्ध विरोधी संघर्ष में बहुत योगदान दिया है।

क्वेकर पंथ के सिद्धांत के अनुसार ल्युक्रेशिया ने गुलामी का विरोध करने के लिए उन वस्तुओं (जैसे सूती कपड़ा, चीनी आदि) का बहिष्कार किया था, जिन वस्तुओं के उत्पादन में गुलामों का उपयोग होता था। वे और उनके पति दोनों अलग-अलग स्थानों में घूम-घूमकर कर गुलामी उन्मूलन का प्रचार करते थे और मालिक के यहां से भागे हुए गुलामों को आश्रय देते थे।

उस समय गुलामी उन्मूलन संगठनों में महिलाओं को सदस्य का पद नहीं दिया जाता था, अतः ल्युक्रेशिया ने गुलामी विरोधी महिलाओं का अलग संगठन बनाया। जैसा कि पहले बताया गया

था, १८४० में लंदन में गुलामी विरोधी विश्व परिषद का आयोजन हुआ जिसमें उनको अपने अंचल के प्रतिनिधि के रूप में चुन कर भेजा गया था। इस परिषद में एक समूह स्त्रियों के सार्वजनिक वक्तव्य देने का विरोधी था। एलिजाबेथ स्टेनटोन और ल्युक्रेशिया मोट को अलग बैठना पड़ा। इसके विरोध में विलियम लोयड गैरिसन जैसे पुरुष नेता भी अन्य पुरुषों के साथ बैठने के बजाय उन दोनों के साथ बैठे। इसी बैठक में एलिजाबेथ स्टेनटोन और ल्युक्रेशिया मोट ने तय किया कि वे महिलाओं के अधिकार के लिए साथ मिल कर पुरजोर प्रयत्न करेंगी। इन दोनों के संयुक्त प्रयत्नों से १८४८ में अमेरिका में आयोजित महिला अधिकार की प्रथम ऐतिहासिक परिषद के बीज इसी स्थान पर इसी अनुभव द्वारा रोपे गये थे।

इसके पश्चात वे अमेरिकी समान अधिकार परिषद की पहली अध्यक्ष बनीं। अमेरिका में जब महिलाओं के मताधिकार और काले पुरुषों के मताधिकार के बीच टकराव खड़ा हुआ, तब उसे दूर करने के लिए वे निरंतर प्रयत्नशील रहीं। वे जीवन भर महिलाओं के मताधिकार और अफ्रीकी-अमेरिकी जनता के अधिकार हेतु लड़ती रहीं।

आशा: आखिर अमेरिकी महिलाओं को मताधिकार कब मिला?

एकता: २०वीं सदी के शुरू में अमेरिकी महिलाओं ने भी इंग्लैंड की महिलाओं के रास्ते पर चलना तय किया। ऐलिस पाउल नामक महिला ने नेशनल वीमेन्स पार्टी स्थापित की और लड़ाई का रास्ता अपनाया। एक समय उसने अमेरिका के राष्ट्रपति निवास व्हाइट हाउस की बाड (फेन्स) के साथ जंजीर से स्वयं को बांध लिया और इस तरह सरकार का ध्यान खींचने का प्रयत्न किया। वैसे अमेरिका में भी प्रथम विश्व युद्ध के अंत में महिलाओं के द्वारा युद्ध में की गई उल्लेखनीय सेवा को ध्यान में रखकर ही १९२० में समस्त वयस्क महिलाओं को मत देने का अधिकार मिला था।

रेशमा: अपने अधिकारों के लिए लड़ने वाले मजदूरों के आंदोलन, सामाजिक क्रांति या गुलामों की मुक्ति की लड़ाई में कंधे से कंधा मिलाकर, लड़ने के बावजूद ऐसा लगता है कि स्त्रियों के अधिकारों के मामले में सभी आंदोलनों ने कदम पीछे ही रखे हैं।

कमलाः और अभी तो मतदान का ही अधिकार मिला था, लेकिन स्त्रियों ने केवल मताधिकार के लिए ही तो लड़ाई नहीं लड़ी थी न?

शकरीः सही बात है। घर में एवं काम करने में जो अधिकार मिलने चाहिए उनका क्या?

एकताः सच्ची बात है। मतदान के लिए लड़ाई तो एक शुरूआत थी। एक नागरिक के रूप में बुनियादी हक प्राप्त करने की एवं सामूहिक संघर्ष के पाठ सीखने की। इसके साथ ही काम करने की बेहतर स्थितियों के लिए महिला कर्मचारियों का संघर्ष तो जारी ही था। परिवार और समाज में समानता के लिए अभी लंबा एवं कठिन संघर्ष तो बाकी ही था। उसका इतिहास महिला दिवस के इतिहास के साथ जुड़ा हुआ है।

आशाः महिला दिवस के इतिहास की बात अब कल करेंगे। आज मैं आपको गुलामी, अन्याय, असमानता दूर करके नूतन मानव के सर्जन की बात करने वाली बहनों का गाना सुनाऊंगी।

चलो आओ बहनों हम मिल कर गायें

चलो आओ बहनों हम मिल कर गायें - २
हम नूतन मानव के सर्जन की कथा सुनायें - २
हम नई चेतना लायें - २
    जहाँ समानता, न्याय और मानवता हो - २
    जहाँ नारी पर पुरुष का एकाधिकार ना हो - २
    हम ऐसा समाज बनायें - २
    चलो आओ बहनों...
कोई गुलाम न हो, कोई मालिक ना हो - २
कोई दलित या सवर्ण, हिन्दू मुसलमान ना हो - २
हम मानव को मानव बनायें...
चलो आओ बहनों...
    हम जी हुकमी का मुकाबला करें
    हम निडर बनें और नारी संघर्ष को बढ़ायें
    हम नये मूल्यों को लायें - २
    चलो आओ बहनों हम मिल कर गायें

- विभूति पटेल

८ मार्च, अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का इतिहास

एकता: अमेरिका में काम की परिस्थितियों को सुधारने के लिए स्त्री मजदूरों के वर्षों तक जुझारु संघर्षों से शुरू करके दुनिया के समस्त देशों की स्त्रियों द्वारा किए अनेक संघर्षों की याद में आज हम महिला दिवस मनाते हैं।

यह बात १९वीं सदी की है। उस समय अमेरिका के न्यूयार्क शहर में कपड़ा-सूत उद्योग में हज़ारों स्त्री मज़दूर काम करती थीं। इनमें से अधिकांश रूस, इटली, पौलेन्ड जैसे देशों से आई हुई स्थानांतरित महिलाएं थी। फैक्टरियों में काम करने वाली स्त्रियों की यह पहली पीढ़ी थी। उनके काम पुरुष कर्मचारियों से अलग कर दिए गए थे। वे दिन में १५-१५ घंटे काम करतीं। उन्हें काम के नग के अनुसार वेतन मिलता था जो काफी कम था। मालिक लोग सुई, धागा, बिजली आदि का खर्चा भी उनके वेतन से काट लेते थे। इसके अलावा शौचालय में अधिक समय लगे तो उसका दंड, देरी हो तो वेतन कटता, इस तरह उनकी कार्य की स्थितियां काफी कठिन थीं। लेकिन मज़दूर यूनियनें तो पुरुष मज़दूरों की ओर ही ध्यान देती थीं, अतः महिला मजदूरों ने हरेक यूनियन में अपने अलग समूह बनाना शुरू कर दिया।

१८२० में स्त्री मज़दूरों ने सर्व प्रथम न्यू इंग्लैंड टेलरिंग ट्रेड नामक कारखाने में हड़ताल की। परंतु लंबी लड़ाई के बाद मजबूरन उन्हें कम वेतन पर फिर से काम पर आना पड़ा। उनकी काम की परिस्थितियां इतनी खराब थीं कि इन महिलाओं को १८३४, १८३६ और १८४४ में बारबार हड़ताल करनी पड़ी।

परंतु मज़दूर यूनियनों के पुरुष मज़दूरों एवं उनके नेताओं ने महिलाओं की समस्याओं की तरफ आंखे मूंदें रखना जारी रखा। इससे आखिरकार महिला मज़दूरों को अपनी अलग यूनियन बनानी पड़ी।

८ मार्च १८५७ में न्यूयार्क की कपड़ा मज़दूर स्त्रियों ने दस घंटे की पाली के लिए मोर्चा निकाला और फैक्ट्री के दरवाज़ों पर धरना दिया। परंतु इस विरोध प्रदर्शन को पुलिस ने लाठी एवं गोली से सख्ती से दबा दिया।

१८५७ की लड़ाई के ५१ वर्ष पूरे होने के बाद ८ मार्च १९०८ को फिर एक बार १५००० महिला मज़दूरों ने काम के घंटे कम करके दस घंटे की पाली करने, बाल मज़दूरी को खत्म करने, वेतन बढ़ाने एवं मताधिकार के लिए न्यूयार्क के रास्ते गुंजाए। इस बार भी उनकी आवाज़ दबाने के लिए पुलिस तैयार थी। हजारों स्त्रियां गिरफ्तार हुईं। पुलिस की मार, मालिकों के भाड़े के गुंडों द्वारा बुरी तरह मारपीट, हमलों आदि को सहन करके भी स्त्रियों ने लड़ाई चालू रखी। इनमें से कई मज़दूर स्त्रियां तो अभी किशोरियां हीं थीं। इन मज़दूर स्त्रियों की लड़ाई का समर्थन करने के लिए, वीमेन्स ट्रेड यूनियन लीग की मध्यम वर्ग की पेशेवर एवं कई उच्च वर्ग की संवेदनशील स्त्रियां भी उनके साथ रास्ते पर आईं। जब इन मध्यम वर्गीय स्त्रियों की भी गिरफ्तारी की गई तब समाज के वाचाल वर्ग का ध्यान इन मज़दूर स्त्रियों की गुलामी जैसी परिस्थितियों की तरफ आकृष्ट हुआ।

१९०९ में फिर एक बार "२०,००० लोगों का विद्रोह" के रूप में विख्यात लड़ाई की शुरूआत हुई और उसमें से पूरे कपड़े-सूत उद्योग की सभी फैक्टरियों में बड़ी हड़ताल, 'जनरल स्ट्राइक' हुई। इस हड़ताल में २०,००० से ३०,००० महिला मज़दूरों ने भाग लिया। इस संघर्ष में भाग लेने वाली एक महिला मज़दूर ने लड़ाई का वर्णन इस प्रकार किया है।

"हजारों मज़दूर अपनी फैक्ट्री छोड़कर हर दिशा से यूनियन स्कवेयर की तरफ आ रहे थे। नवम्बर का महीना था और सर्दी शुरू हो गई थी। हमारे पास शरीर को गर्म रखने के लिए कपड़े

नहीं थे, फिर भी हमारा आत्मबल एवं उत्साह हमें आगे ले जा रहा था। मुझे चारों तरफ युवा लोग, खासकर के स्त्रियां चलती हुई दिखती थीं। उन्हें जरा भी चिंता नहीं थी कि क्या होगा। उन्हें भूख, ठंडी अकेलापन, किसी की भी चिंता नहीं डरा सकती थी क्योंकि यह उनका दिन था।"

सर्दी की कड़कड़ाती ठंड़ में सोलह से पच्चीस वर्ष की स्त्रियां १३-१३ सप्ताह तक हर रोज़ धरना देती रहीं। जब पुलिस उनको पकड़कर जज के पास ले जाती तो जज उनसे कहते थे "आपकी हड़ताल ईश्वर एवं प्रकृति के विरुद्ध है क्योंकि ईश्वर का सिद्धांत है कि मनुष्य को रोटी कमाने के लिए पसीना बहाना चाहिए।"

शकरी: अरे! जज को मालिकों द्वारा मज़दूर स्त्रियों का गुलामों की तरह शोषण ईश्वर के विरुद्ध नहीं लगता था, परंतु अपने अधिकारों के लिए लड़ने वाली स्त्रियां ईश्वर के विरुद्ध लगती थी!

एकता: हां, इसमें धर्म, कानून एवं पूंजीपतियों की सांठगांठ साफ तौर पर नजर आती है। इस लड़ाकू संघर्ष को अंत में दबा दिया गया परंतु यह जबरदस्त संघर्ष इसमें भाग लेने वाली स्थानांतरित स्त्रियों एवं पीड़ितों के लिए एक गौरव का विषय बन गया। इन घटनाओं से पुरुषों एवं उनकी यूनियनों की दलील हमेशा के लिए गलत साबित हो गई कि स्त्रियां संगठित नहीं हो सकती और लंबी लड़ाई करने के लिए सक्षम नहीं है। इन स्त्री मज़दूरों की मानवीय जीवन के लिए आकांक्षा उनके संघर्ष के एक सूत्र में हूबहू व्यक्त होती है "हमें रोटी चाहिये और गुलाब भी" (वी वॉन्ट ब्रेड एन्ड रोज़ेज टू)

आशा: कितना अच्छा है! परंतु इतनी लड़ाई के बावज़ूद पूंजीपतियों एवं सरकार के पेट का पानी तक नहीं हिला!

एकता: आखिर १९११ में ट्रायंगल आग नामक घटना हुई जिसमें कारखाने में काम करने वाली तेरह से पच्चीस वर्ष की १४६ स्त्रियां जल गईं क्योंकि इनके मालिकों ने कारखाने को बाहर से बंद कर रखा था ताकि वे कारखाने से भाग नहीं सकें। पूरे अमेरिका में इस घटना की प्रतिक्रिया होने के कारण सरकारों पर काम की परिस्थिति सुधारने के लिए कानून पारित करने का दबाव आया।

परंतु इस दौरान १९१० में मज़दूर स्त्रियों के संघर्ष को ध्यान में रखकर पहली बार पूरे अमेरिका में समाजवादी स्त्रियों ने ८ मार्च को महिला दिवस मनाया था। इसके बाद वे समाजवादी स्त्रियों के अंतर्राष्ट्रीय परिषद में कोपेनहेगन गईं थी। इस परिषद में दुनिया के १७ देशों की स्त्री मज़दूरों के १०० प्रतिनिधि आए थे। जर्मनी की महिला नेता क्लेरा जेटकीन अमेरिका की स्त्रियों की लड़ाई से काफी प्रभावित हुईं थीं। उन्होंने प्रस्ताव रखा कि अमेरिका की जुझारू स्त्री मज़दूरों की याद में दुनिया भर में ८ मार्च को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाए। उनके इस प्रस्ताव को सबने सर्व सम्मति से पास कर दिया।

रेशमाः इस परिषद में दुनियाभर की औरतों के अधिकार के लिए भी कुछ मांगें रखी गई थी?

एकताः हां, इसमें महत्त्वपूर्ण मांगें ये की गई कि संपत्ति के आधार पर मताधिकार के बदले सभी वयस्क स्त्री-पुरुषों को सार्वत्रिक मताधिकार मिलना चाहिए एवं मज़दूर स्त्रियों को प्रसूति लाभ दिलाने के लिए दुनिया भर में संघर्ष चलाना चाहिए।

उस समय कई समाजवादी मानते थे कि स्त्रियों के मताधिकार की बात करेंगे तो संपत्तिशाली स्त्रियों को मताधिकार मिल जायेगा। परंतु संपत्ति हीन पुरुष मज़दूर रह जाएंगे। इसी कारण समाजवादी आंदोलन में फूट पड़ जाएगी। परंतु क्लेरा जेटकीन ने इस परिषद में घोषणा की कि 'स्त्रियों को मताधिकार मिलेगा तो समाजवाद के लिए हमारी लड़ाई और मज़बूत बनेगी।'

समाजवादी आंदोलन में स्त्रियों के अधिकारों के लिए लगातार संघर्ष करने वाली महिलाओं में रोज़ा लक्जम्बर्ग एवं रूस की क्रांतिकारी नेता एलेक्जेंड्रा कोलोन्ताई भी शामिल थी।

फरजानाः हमें क्लेरा जेटकीन, एलेक्जेंड्रा आदि के बारे में बताओ न।

क्लेरा जेटकीन

क्लेरा जेटकीन का जन्म १८५७ में जर्मनी में हुआ था। उन्होंने शिक्षिका बनने का प्रशिक्षण लिया था एवं वे जर्मनी में स्त्रियों के अधिकारों के आंदोलन एवं मज़दूर आंदोलन के साथ जुड़ी हुई थीं। १८७८ में वे समाजवादी मज़दूर पार्टी (सोशलिस्ट वर्कर्स पार्टी) के साथ जुड़ीं। जब जर्मनी के तानाशाही शासक बिस्मार्क ने इस दल पर प्रतिबंध लगाया तो देश निकाले के बाद वे पेरिस में रहीं।

उन्होंने समाजवादी आंदोलन में अपनी मित्र रोज़ा लक्जम्बर्ग के साथ मिलकर स्त्रियों के अधिकारों के मुद्दों को आगे बढ़ाया। जर्मनी में वे 'समानता' नामक स्त्रियों के समाचार पत्र की संपादक बनी एवं अपने असरदार लेखन से तीन वर्ष में ही इस अखबार की बिक्री को ११,००० से ६७,००० तक पहुंचाया।

उनकी युद्ध विरोधी गतिविधि भी काफी विख्यात है। १९१५ में प्रथम विश्व युद्ध शुरू होने के बाद जर्मनी के समाजवादी दल ने वहां की सरकार के साथ ऐसा समझौता किया कि वे युद्ध के दौरान मजदूरों के अधिकारों के लिए हड़ताल नहीं करेंगे। जेटकीन ने रोज़ा लक्जम्बर्ग के साथ मिलकर उसका विरोध किया और उन्होंने नए साम्यवादी दल की स्थापना की।

युद्ध के विरोध में बर्लिन में अंतरराष्ट्रीय युद्ध विरोधी महिला परिषद आयोजित की। उनके युद्ध विरोधी कार्यों के कारण सरकार ने उन्हें अनेक बार गिरफ्तार किया एवं जर्मनी में हिटलर सत्तारूढ़ हुआ तब जेटकीन के साम्यवादी दल को प्रतिबंधित घोषित कर दिया। क्लेरा जेटकीन एक बार फिर देश निकाला पाकर रूस में रहने आईं। उसके बाद १९३३ में अपनी मृत्यु तक वे रूस में ही रहीं।

नीरू: क्लेरा जेटकीन एवं अन्य बहनें समाजवाद की बातें करती हैं तो उससे स्त्रियों को क्या लाभ मिला? वे इसमें किसलिए शामिल हुईं?

कमला: मैंने पढ़ा है कि रूस में समाजवादी क्रांति हुई एवं परिणामस्वरूप कभी गरीबी से ग्रस्त रूस अमेरिका जैसे देश को चुनौती देने वाली महाशक्ति बन गया था। यह कैसे हुआ?

रेशमा: आप कहती थीं कि रूस में समाजवादी क्रांति हुई थी तो क्या अपने देश के समाजवादी दल जैसे दलों ने वहां क्रांति की?

एकता: नहीं, अपने देश में एवं दुनिया के अन्य देशों में भी आज कई दल समाजवाद शब्द का उपयोग करते हैं एवं अपने को समाजवादी कहते हैं, लेकिन समाजवाद के लिए नहीं लड़ते। समाजवाद का अर्थ यह है कि जैसे कारखाने, उद्योग धंधे, खानें, खेत आदि उत्पादन के समस्त साधनों पर यहां जिस तरह पूंजी पतियों का स्वामित्व है, उसके बदले उन पर समाज का स्वामित्व हो। आज पूंजीपति कोई भी उत्पादन मुनाफा प्राप्त करने के लिए करते हैं, उसके स्थान पर लोगों के उपयोग के लिए उत्पादन करना।

आशा: इससे क्या लाभ होगा?

एकता: आज एक तरफ गोदाम में अनाज हो, दुकानों में चीजें हों फिर भी अनेक लोग भूखे मरते हैं। दवा या देखभाल के बिना मरते हैं, ऐसा किसलिए?

फरजाना: क्योंकि गरीबों के पास उसे खरीदने के लिए पैसे नहीं हैं। बिना पैसे चीज कौन देगा?

एकता: वही बात है। चीज़ें हैं, परन्तु मुनाफा नहीं मिले तो मालिक नहीं बेचता?

शकरी: अरे कई बार तो चीज़ें होते हुए अधिक लाभ कमाने के लिए उनकी कमी बताकर और बाद में बाजार में माल नहीं है कह कर दूकानदार ऊंचे भाव पर बेचता है। फिर चाहे लोग भूखे ही क्यों न मरें।

नीरू: परंतु ऐसे ही मुफ्त में दें तो कोई काम ही नहीं करेगा।

एकता: मुफ्त में नहीं दें, तो भी दो हाथों को काम देने की व्यवस्था तो की ही जा सकती है।

कमला: सही है, हमारे यहां एक तरफ तो बेरोजगारों की फौज बढ़ती जा रही है तो दूसरी तरफ मुनाफा बढ़ाने के लिए कार्यालयों एवं कारखानों में मनुष्य के स्थान पर अधिक उत्पादन करने वाली महँगी मशीनें लगाते हैं, फिर मालिक कहते है कि इतनी महँगी मशीनें लगाई हैं तो चीज़ की कीमत तो बढ़ेगी ही।

एकता: ऐसा इसलिए होता है कि कारखाने के मालिक पूंजीपति होते हैं। समाजवाद का अर्थ ऐसी व्यवस्था से है जिसमें उत्पादन के साधनों पर समाज का स्वामित्व होता है, जिससे उत्पादन लाभ के लिए नहीं बल्कि समाज की जरूरतों को पूरा करने के लिए होता है। सबको अपनी कार्य कुशलता के अनुसार काम मिले। सबको शिक्षा, इलाज एवं आवास दिलाने वाली व्यवस्था।

शकरी: क्या उसमें स्त्रियों को भी काम मिले? ताकि उसे अपने घर के पुरुषों पर निर्भर नहीं रहना पड़े?

एकता: मार्क्स, ऐंजल्स, लेनिन, एलेक्जेन्ड्रा कोलोन्ताई, ट्रीटस्की, क्लेरा जेटकीन एवं रोज़ा लक्जम्बर्ग जैसे क्रांतिकारी, नेताओं एवं विचारकों द्वारा बनाए सिद्धांतों में स्त्री-पुरुष सबके लिए समानता की बातें लिखी हैं। हम देखेंगे कि रूस या अन्य जिन देशों में समाजवादी क्रांति हुई थी वहां अमेरिका, इंग्लेंड या फ्रांस जैसे पूंजीपति देशों की बराबरी में क्या स्त्रियों को वास्तव में अधिकार मिले हैं। परंतु समय के साथ इन देशों में कई विकृतियां भी आई हैं एवं उनकी व्यवस्था की सीमाएं भी देखने को मिली हैं।

रेशमा: समाजवादी देशों में औरतों को जो अधिकार मिले और उनकी जो मर्यादा है उसके बारे में हमें बताओ।

एकता: हम रूस की क्रांति के उदाहरण से इस बात को समझेंगे। और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पूरी पूंजीवादी दुनिया को कंपा देने वाली और कई देशों की जनता को शोषण के विरुद्ध संघर्ष का नया रास्ता बताने वाली रूसी क्रांति की आग की पहली चिंगारी अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस को स्त्री मजदूरों द्वारा शुरू किए आंदोलन ने ही लगाई थी।

लेकिन उसकी बात हम कल करेंगे। आज की चर्चा का अंत महिला दिवस कि प्रेरणा बनी कपड़ा मज़दूर स्त्रियों के संघर्ष को श्रद्धांजलि देकर करेंगे।

महिला दिवस का इतिहास

हम मेहनत करने वाली सब एक हैं-एक हैं
हम मिल को चलाने वाली सब एक हैं-एक हैं
हम जुल्म से लड़ने वाली सब एक हैं-एक हैं

सोलह घंटे काम हमें मंजूर नहीं
सरमाये का राज हमें मंजूर नहीं
काम का आधा दाम हमें मंजूर नहीं
बेइन्साफ़ी का राज़ हमें मंजूर नहीं
दुनिया को बदलने वाली सब एक हैं-एक हैं

करके फाके, लेकर बच्चे वो डटी रहीं
अपनी फैक्ट्री के गेट से हटी नहीं
हस्ती उनकी जुल्मों ज़ोर से मिटी नहीं
हिम्मत उनकी दौरे जंग में घटी नहीं
हम चिंगारी सी नारी सब एक हैं-एक हैं

सो साल पहले छिड़ी लड़ाई ये
जब मज़दूर बहनें आई थीं मैदान में
मिल मालिकों ने खूब चलाई गोलियाँ
हारी नहीं वो आगे बढ़ती नारियाँ
हम मौत पे हँसने वाली सब एक हैं-एक हैं

- आभा, रूनू, कमला

रूसी क्रांति की शुरूआतः "हमे रोटी चाहिये ना कि युद्ध या तानाशाही"

एकता: ८ मार्च १९१७ का दिन था। हर वर्ष की तरह सभा, भाषण, पत्रिका वितरण जैसे कार्यक्रम के आयोजन किए गए थे। रूस के क्रांतिकारी नेता लियो ट्रीटस्की ने इतिहास में लिखा है कि "किसी को अनुमान भी नहीं था कि यह क्रांति का पहला दिन बन जायेगा। किसी भी संगठन ने उस दिन हड़ताल की घोषणा नहीं की थी। परंतु सभी सूचनाओं के बावजूद कपड़े-सूत की कई मिलों की स्त्री मजदूर हड़ताल पर गईं एवं धातु के कारखानों के मजदूरों को समर्थन देने को अपील करने हेतु प्रतिनिधि मंडल भेजा..।" वास्तव में काफी समय से मजदूर आंदोलन के लिए उतावले हो रहे थे। लंबी होती ब्रेड की लाइनों ने उसमें चिंगारी का काम किया। कहते हैं कि उस दिन ९०,००० मजदूर स्त्री-पुरुष हड़ताल पर गए थे। स्त्रियों के एक समूह ने ब्रेड की मांग के साथ ड्यूमा (संसद) की ओर कूच किया, परंतु वह तो 'बैल के पास दूध मांगने जैसा था'। जगह-जगह लाल बैनर लगे थे जिन पर लिखा था कि "हमें रोटी चाहिए न कि युद्ध या तानाशाही।" दूसरे दिन भी यह ज्वार घटा नहीं, अपितु बढ़ता ही गया। अन्य जिलों में भी फैलता गया।

शकरी: इतने सारे लोग सड़कों पर आ गए तो क्या सरकार ने इन मजदूरों को रोकने के लिए पुलिस या सेना नहीं भेजी?

एकता: तुम्हारा प्रश्न उचित है। सामान्य जनता के किसी भी संघर्ष को पुलिस एवं सेना जैसे सरकार के दमनकारी तंत्र का सामना तो करना ही पड़ता है, और रूस में तो ज़ार की तानाशाही सरकार थी। परंतु उस समय एक अजीब घटना हुई उसने लोगों के डर को दूर कर दिया। उस वक्त रूस की सेना युद्ध में व्यस्त थी।

युद्ध जारी रखने के लिए अनेक नए लोगों की भरती की गई थी। कई स्त्री मजदूरों के पिता, पति एवं भाई सेना में थे इसलिए वे युद्ध को रोकना चाहती थी।

उन्होंने अपने आंदोलन में सैनिकों को भी अपने साथ जुड़ने की अपील की। जगह-जगह स्त्री-पुरुष मजदूर सैनिकों के साथ बातचीत करके उन्हें अपनी वाजिब मांगों एवं न्याय के लिए संघर्ष के बारे में समझाते थे। एक स्थान पर पुलिस के एक सिपाही ने संघर्ष करने वाली स्त्री मजदूर को बंदूक के कुंदे से मारा तो एक सैनिक उसको पकड़ कर दूर ले गया। वह बात हवा की गति से फैल गई.... 'सेना हमारे साथ है'। क्रांतिकारी स्त्री-पुरुषों की हिम्मत बढ़ गई। इसके बाद वाले दिनों में हड़ताल में शामिल मजदूरों की संख्या २,४०,००० तक पहुंच गई और यह सिलसिला जारी रहा। क्रांतिकारी संगठन अभी भी पशोपेश में थे, उनके कई नेता मजबूरी में देश निकाला भुगत रहे थे। परंतु स्त्री मजदूरों द्वारा लगाई आग शहरों एवं गांवों में फैलती जा रही थी। लोग ज़ार की तानाशाही, जुल्मी शासन एवं भुखमरी से तंग आ गए थे। गिरफ्तारी का दौर शुरू होने के बावजूद भी वे नहीं रुके। क्रांतिकारी लोगों ने सैनिको को भी विद्रोह करने के लिए तैयार किया। मजदूरों ने सेना की मदद से हथियार प्राप्त किए एवं जुल्मी पुलिस एवं रक्षकों का सामना किया। खून बहाए बिना सामूहिक ताकत से जेल पर कब्जा किया एवं क्रांतिकारियों को जेल से छुड़ाया। कारखानों पर कब्जा किया। महल पर कब्जा किया। आखिर में ज़ार के मंत्रि-मंडल एवं खुद ज़ार को बंदी बनाया। रूस में एक ओर संसद एवं दूसरी ओर मजदूरों की क्रांतिकारी सोवियत की दोहरी सत्ता चलने लगी।

आशाः सोवियत?

एकताः सोवियत अर्थात् परिषद। रूस की क्रांतिकारी बोल्शेविक पार्टी हर गांव, शहर, कारखानों में अलग-अलग धंधे करने वाले लोगों की परिषद अर्थात् प्रतिनिधिमंडल बनाती थी। इसमें जनता अपने क्षेत्र या व्यवसाय के अग्रणी प्रतिनिधियों को चुनकर भेजती थी। अब ज़ार के बदले उदारमतवादी पूंजीवादियों ने संसद की सत्ता संभाल ली परंतु मजदूरों की मुख्य मांगें, काम की उचित परिस्थिति, आठ घंटे का कार्य दिवस, किसानों को जमीन आदि

मुद्दों पर यह उदारमतवादी पूंजीवादी सरकार सहमत नहीं हुई। जनता का असंतोष जारी रहा। आखिर में देश निकाला भुगत रहे नेता रूस वापस लौटे। इनमें लेनिन मुख्य थे। रूस के क्रांतिकारी नेता लेनिन ने समस्त सत्ता मजदूरों की सोवियत को दिलाने के लिए आरपार की लड़ाई की घोषणा कर दी और इसके लिए जगह-जगह मजदूर स्त्री-पुरुषों ने तैयारी शुरू कर दी। उनका नारा था "जमीन किसानों को, कारखाना मजदूरों को और सत्ता सोवियतों को"। आखिर में अनेक उथल-पुथल एवं संघर्षों के बाद ७ नवम्बर १९१७ को रूस दुनिया का पहला ऐसा देश बना जहां कारखानों एवं खेतों पर मालिकों का नहीं बल्कि समाज का नियंत्रण हुआ।

नीरू: वास्तव में मुझे लगता है कि इन मजदूर स्त्रियों में अचानक इतनी हिम्मत कैसे आ गई?

एकता: इतिहास में कोई भी बड़ी घटना अचानक या अपने आप नहीं होती। उसके पीछे अनेक कारण होते हैं। वर्षों की मेहनत भी होती है। रूस में भी इसके लिए वर्षों से तैयारी चल रही थी एवं इससे पहले भी कई प्रयत्न किए गए थे। उन अनुभवों से सीख प्राप्त करके क्रांतिकारी आगे बढ़ते थे। यूरोप के सभी देशों में रूस पिछड़ा गिना जाता था। यूरोप के देशों में कई बदलाव हुए किंतु ज़ार के तानाशाही शासन में रूस में उस समय भी राजा के दैवी अधिकारों का झंडा लहराता था।

फरजाना: ज़ार वहाँ के राजा का नाम था?

एकता: रूस के सम्राट को ज़ार कहते थे। उसका नाम निकोलस था। ज़ार निकोलस और उसकी रानी जरीना अपने वैभव और अमर्यादित सत्ता के नशे में चूर थे। उनके आसपास साधु के वेश में रहने वाले रास्पुटिन नामक लंपट, भ्रष्टाचारी, एवं क्रूर व्यक्ति की चंडाल चौकड़ी थी। किसी भी विरोध को क्रूरता से कुचल दिया जाता था। दूसरी तरफ देश की सामाजिक व आर्थिक स्थिति बेहाल थी। पेट्रोग्राड एवं मॉस्को जैसे कई शहरों में बड़े उद्योग स्थापित किए गए थे जबकि रूस के अधिकांश भाग में जमींदारों की तानाशाही में गरीब किसान बदतर जीवन जीते थे। वे बारंबार विद्रोह करते थे। इस परिस्थिति में रूस ने जापान से युद्ध किया।

युद्ध का सारा बोझ सामान्य जनता खासकर के मजदूर एवं किसान स्त्रियों पर पड़ता था। इससे १९०५ में भी व्यवस्था के विरुद्ध क्रांति का एक प्रयास किया गया था। उस समय सेंट पीट्सबर्ग के मजदूरों ने आम हड़ताल की थी और उन मजदूरों में एक तिहाई तो स्त्रियां थी। ये स्त्री मजदूर यूनियन में शामिल होकर अपने आर्थिक हितों के लिए लड़ने के साथ-साथ राजनैतिक जागृति भी प्राप्त करती थीं। वे सभी मजदूरों की आम मांगों के साथ स्त्री मजदूरों की खास जरूरतों की मांग भी करने लगी थीं।

गांवों में स्त्रियों ने युद्ध के विरोध में अनेक बार अपने पुरुषों की सेना में जबरदस्ती भर्ती को रोकने के लिए सेना एवं पुलिस के मुख्यालय पर हाथ में झाड़ू, बुहारी एवं खेती के औजार लेकर घुस जाती थीं और अपने घर के पुरुषों को वहां से वापस ले आती थीं। ये उपद्रव 'पेटीकोट रिबेलियन' के रूप में विख्यात हुए थे। बाद में पुरुष भी उनके साथ शामिल हो गए थे।

शकरी: गांव की इन संघर्षशील औरतों ने अपनी खास मांग क्या रखी थी?

एकता: यह महत्त्वपूर्ण सवाल है। इन स्त्रियों की मांग थी कि जब जमींदारों से जमीन लेकर किसानों को दी जाए तब स्त्रियों को अलग से जमीन दी जाए। नोगटकीनो नामक गांव की स्त्रियों

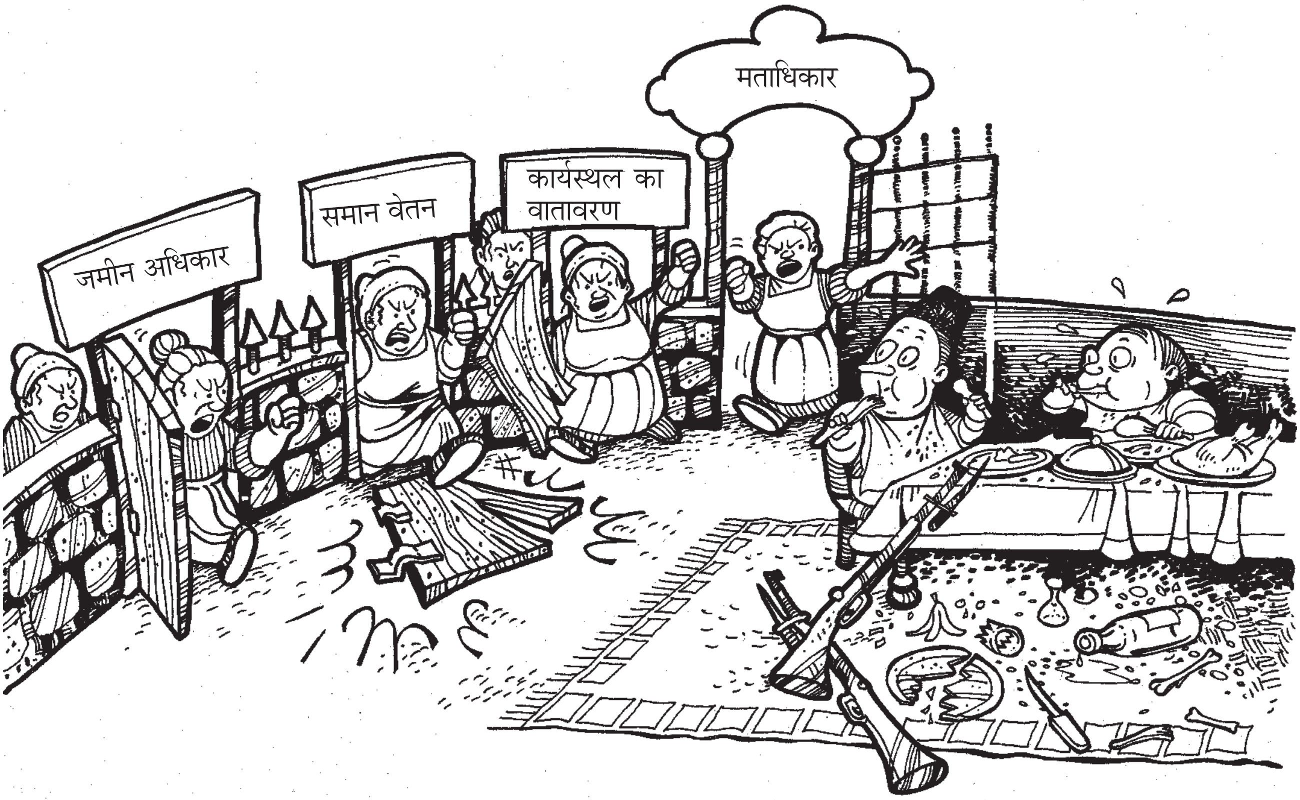

द्वारा लिखा एक आवेदन उनकी बात को काफी असरदायक रूप से पेश करता है। उन्हें मताधिकार एवं जमीन दोनों चाहिए थे। उन्होंने कहा कि, 'रूस की स्त्रियां अपने घरों में भी अधिकारों से वंचित हैं। एक गुलाम स्त्री स्वतंत्र नागरिक की माता नहीं बन सकती... यदि जमीन पुरुषों को ही मिलेगी तो हमें वास्तव में गुलामी ही सहनी होगी। अभी तो हम मजदूरी कर के कम से कम थोड़े बहुत कोपेक (रूसी मुद्रा) तो अपने आप कमा सकती हैं परंतु फिर तो हम हमारे पुरुषों के लिए ही काम करेंगी।'

कमला: इतनी सच्ची बात कितने सरल शब्दों में कही है।

एकता: इसी तरह शहर के मजदूरों ने सरकार द्वारा नियुक्त समिति के समक्ष अपनी बात कहने के लिए प्रतिनिधि चुने थे जिनमें एक स्त्री भी थी। जब आयोग ने यह बताया कि वे केवल पुरुष प्रतिनिधियों से ही बात करेंगे तो स्त्री मजदूरों ने उनका विरोध किया। संसद के चुनावों से पहले की सभाओं में घुसकर स्त्रियों ने राजनैतिक निर्णयों में से अलग रखने के खिलाफ विरोध व्यक्त किया। ४०,००० हस्ताक्षर लेकर संसद से मताधिकार की मांग की। वे मताधिकार की मांग तक ही नहीं रुकी परंतु काम की अच्छी परिस्थितियों की भी मांग की। इस तरह मताधिकार,

मजदूर के रूप में अधिकार तथा स्त्री मजदूर के रूप में खास अधिकार, इन तीनों प्रकारों के अधिकारों की मांग में उनकी जागृति देखने को मिली।

मजदूर आंदोलन के कई नेता स्त्रियों के खास प्रश्नों एवं अधिकारों के बारे में स्पष्ट नहीं थे। वे मानते थे कि मुख्य लड़ाई मालिक व मजदूर के बीच है, अतः स्त्रियों के प्रश्न सामने आयेंगे तो मजदूरों में फूट पड़ेगी और मालिकों के साथ लड़ाई कमज़ोर होगी। परंतु एलेक्जेंड्रा कोलोन्ताई, क्रिप्सकाया, क्लेरा जेटकीन जैसी कई अग्रणी काफी स्पष्ट तरीके से इन विचारों के विरुद्ध संघर्ष करती थीं एवं वर्ग व्यवस्था के साथ-साथ स्त्रियों के प्रश्नों पर भी उतना ही ध्यान देने का आग्रह करती थीं। इन महिला अग्रणियों के प्रयासों से 'रोबोतनीस्तसा' यानि स्त्री मजदूर पत्रिका की शुरूआत हुई। इसने स्त्रियों में क्रांतिकारी जागृति फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। स्त्री मजदूरों के अलग मंडल एवं परिषद बने।

इस तरह १९०५ की विफल क्रांति के बाद ये क्रांतिकारी आराम से नहीं बैठे। उन्होंने लगातार लोगों को, स्त्रियों को, क्रांतिकारी विचारों का शिक्षण देना चालू रखा। केवल चर्चाओं एवं पत्रिकाओं से ही नहीं परंतु हर रोज कारखानों एवं खेतों में मालिकों एवं सरकार के साथ संघर्ष में भी मजदूर एवं किसान स्त्री-पुरुषों ने बहुत कुछ सीखा था। १९१७ में ८ मार्च को शुरू हुई चिंगारी को अंतिम विजय तक ले जाने के लिए इन सभी अनुभवों के आधार पर सावधानीपूर्वक आयोजन किया गया था। मजदूर, किसान एवं सैनिकों की सोवियत हर रोज घटनाक्रम पर नज़र रखकर अपनी रणनीति बनाती थी एवं उसी से नवम्बर १९१७ में क्रांति संभव हो पाई।

रेशमाः तो क्रांति के बाद स्त्रियों को क्या मिला?

एकताः क्रांति की सफलता के बाद सोवियत रूस में स्त्रियों को वे अधिकार मिले जिनके बारे में पूंजीवादी देशों में सोचा भी नहीं गया था। वे तमाम बंधन जो उन्हें सामाजिक-राजनैतिक प्रवृत्तियों में भाग लेने से रोकते थे, उन्हें दूर किया गया। आपातकालीन प्रसूति सहायता एवं स्वास्थ्य बीमा का कानून पास किया गया।

सामाजिक बीमा का फंड बनाया गया जिसमें मजदूरों से अंशदान लिए बिना स्त्री मजदूरों एवं पुरुष मजदूरों की पत्नियों के लिए प्रसूति एवं स्वास्थ्य देखभाल की व्यवस्था की गई। परिवार में स्त्री-पुरुष समानता का कानून पास किया गया। तलाक की प्रक्रिया सरल की गई। जहां तलाक के लिए आपसी सहमति न हो वहां कोर्ट की मध्यस्थता एवं भरण-पोषण का भरोसा दिलाया गया। बालकों की जिम्मेदारी माता की नहीं परंतु सामूहिक रूप से समाज की है इस विचारधारा के अंतर्गत गर्भवती स्त्रियों के लिए प्रसूति अवकाश के अतिरिक्त नौकरी में अनेक सहूलियतें दी गईं। बाल देखभाल केन्द्र, सामुदायिक भोजनशाला, युवाओं के लिए खेलकूद के मैदान, शिविर आदि के द्वारा माता को ही बालक की पूरी जिम्मेदारी उठाने से मुक्ति दी गई और इस तरह स्त्रियों के लिए सच्चे अर्थ में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार उपलब्ध कराया गया।

फरजाना: कानून तो बने पर क्या उन पर अमल हुआ था?

एकता: तुम्हारा प्रश्न वाजिब है। हमारे देश में भी कई कानून बनते हैं परंतु उन पर अमल नहीं होता जबकि रूस का समाज तो अत्यंत पिछड़ा था। इसलिए समाज इन बदलावों को स्वीकार करे एवं लोग भूतकाल की पुरातन पुरुष प्रधान ग्रंथियों में से बाहर निकल सकें उसके लिए खास प्रयत्न किए गए। यह समझाने के लिए

खास आयोग बनाया गया कि स्त्रियां अपने अधिकारों का उपयोग कैसे करें। एलेक्जेंड्रा कोलोन्ताई जैसी सशक्त अग्रणियों ने सामाजिक सेवाओं के लिए कमिश्नर का पद संभाल कर उन पर अमल करने के लिए इच्छाशक्ति से काम किया।

नीरू: तब तो रूस की स्त्रियां आज तक काफी आगे निकल गई होंगी?

एकता: दुर्भाग्य से रूस की क्रांति को अनेक अवरोधों का सामना करना पड़ा। पूंजीवाद के सामने मजदूरों की सत्ता हासिल करने वाले इस पहले देश पर पूरी दुनिया की सेनाओं ने हमला किया। रूस के अंदर से पूंजीवादियों के षडयंत्र एवं बाहर से युद्ध की परिस्थिति में उनके नेताओं को तत्काल परिस्थिति को नियंत्रित करने के लिए विरोधियों के लोकतांत्रिक अधिकारों को वापस लेने जैसे कई कटु निर्णय करने पड़े। ये कुछ समय के लिए ही थे। युद्ध की परिस्थिति खत्म होने के बाद ट्रोस्की जैसे कई नेताओं ने लोकतंत्र को वापस लाने की तरफदारी की, परंतु लेनिन जैसे नेताओं की मृत्यु के बाद स्टालिन एवं उनके साथियों ने सभी विरोधों को दबा दिया।

मजदूरों को सच्चा लोकतंत्र देने के बदले मजदूरों के नाम पर वहां के सत्ताधारी साम्यवादी दल ने अपनी सत्ता चालू रखी। ट्रोस्की सहित कई लोगों को देश निकाला दिया, कइयों की हत्या कर दी गई। इस तरह जिस समाजवादी रूस में मजदूर जनता की आवाज सभी क्षेत्रों में होनी चाहिए थी उसके बदले उसका नाम तानाशाही के साथ जुड़ गया। उसका असर स्त्रियों के अधिकारों पर भी पड़ा।

आशा: वह कैसे?

एकता: जहां लोकतंत्र न हो और विरोधी विचारधारा को दबा दिया जाता हो, वहां स्त्रियों का विकास भी रुक गया। 'उत्पादन के काम में स्त्रियां शामिल होंगी तो अपने आप स्वतंत्रता मिल जाएगी', साम्यावादी नेताओं की इस समझ के कारण रोजगार मिला, आर्थिक स्वतंत्रता मिली परंतु घर की जिम्मेदारी कम नहीं हुई। दुगने बोझ के कारण सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में स्त्रियों के योगदान एवं भूमिका पर प्रभाव पड़ा। राजनैतिक क्षेत्र में निर्णायक भूमिकाओं में स्त्रियों की संख्या कम ही रही। इस तरह पूरी-पूरी समानता नहीं मिली। परंतु क्रांति से पहले जिस पिछड़ी स्थिति

एवं निरक्षरता में स्त्रियां थीं उसकी तुलना में एवं यूरोप-अमेरिका के खूब घनाढ्य माने जाने वाले अन्य पूंजीवादी देशों की तुलना में भी, जिस तेजी से सोवियत रूस की स्त्रियों का विकास हुआ, उसको देखते हुए यह कहा जा सकता है कि यदि राज्य की इच्छा शक्ति हो तो सामाजिक भेदभावों को बदला जा सकता है।

आशाः हमे एलेक्जेंड्रा कोलोन्ताई के जीवन के बारे में विस्तार से बताइए।

एकताः **एलेक्जेंड्रा कोलोन्ताई (१८७२-१९५२)** कई तरह की प्रतिभाओं से संपन्न थीं। १८७२ में रूस के धनवान अधिकारी के परिवार में जन्मी कोलोन्ताई के जीवन में समस्त भौतिक सुख मौजूद थे। उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त की थी एवं कला साहित्य में अभिरुचि रखने वाली यह प्रतिभावान युवति रूस के जाने माने उच्च परिवारों के साथ संपर्क में थीं। परंतु प्रगतिशील साहित्य एवं क्रांतिकारी विचारों से परिचित संवेदनशील कोलोन्ताई संपन्न जीवन छोड़कर रूस के ज़ार के विरुद्ध संघर्ष में प्रखर क्रांतिकारी के रूप में शामिल हो गईं।

जब वे स्विटज़रलैंड एवं लंदन में अध्ययन कर रही थीं तब मार्क्सवादी विचारों एवं समूहों के संपर्क में आईं एवं रूस वापस आकर रूसी क्रांति के अग्रणी लेनिन से मिलीं और क्रांतिकारी दल में शामिल हुईं। १९०५ में, रूस की पहली क्रांति की साक्षी

बनीं और क्रांति विफल होने पर अपने क्रांतिकारी विचारों के लिए उन्हें देश निकाला भुगतना पड़ा। इस दौरान इंग्लैन्ड, डेन्मार्क, फ्रांस, बैल्जियम, स्विट्ज़रलैन्ड, स्वीडन, नार्वे और अमेरिका जैसे अलग-अलग देशों में भ्रमण करते हुए वहां के मजदूर एवं मजदूर स्त्रियों के अधिकारों के लिए आंदोलन में शामिल हुईं। एक अच्छी वक्ता और लेखिका कोलोन्ताई जहां जातीं वहां क्रांति के विचार फैलाती गईं। उन्होंने क्लेरा जेटकीन के साथ समाजवादी स्त्रियों की अंतरराष्ट्रीय परिषद में अग्रणी के रूप में भाग लिया।

दुनिया के देशों की सरकारें जब विश्व युद्ध की तैयारी कर रही थीं तब वे युद्ध विरोधी आंदोलन की प्रणेता बनीं एवं मार्क्सवादी अध्येता की तरह युद्ध के सामाजिक कारणों की समीक्षा करते हुए उन्होंने कहा कि, "दुनिया में दो ही राष्ट्र हैं - एक शोषण करने वाला एवं दूसरा मजदूर, जिसका शोषण होता है। दुनिया के मजदूरों को सरहद और सीमाओं में विभाजित नहीं कर सकते। यह युद्ध शोषणकर्ताओं के हित के लिए है। सरकारें एक देश के मजदूर को दूसरे देश के मजदूर के विरुद्ध लड़ने को भेजती हैं परंतु हमें युद्ध नहीं शांति चाहिये, सामाजिक क्रांति चाहिये।"

इसी तरह वे जीवन भर क्रांतिकारी महिला आंदोलन को मार्गदर्शन देती रहीं। वे मानती थीं कि केवल मताधिकार के लिए लड़ने वाली धनवान स्त्रियों से मजदूर स्त्रियों की लड़ाई अलग है। उन्होंने मजदूरों का शोषण करने वाली पूंजीवादी व्यवस्था को पलटने के लिए मजदूर स्त्रियों को साथी मजदूरों के साथ क्रांति में शामिल करने का काम किया। इसके साथ ही वे स्त्री मजदूरों के खास प्रश्न, मातृत्व एवं बालक के लालन-पालन की जिम्मेदारी का व्यवहार्य हल लाकर स्त्रियां अपने दैनिक जीवन में समानता पा कर अपनी शक्तियों को पूरी तरह विकसित कर सकें, कला, विज्ञान एवं शासन तंत्र में भाग ले सकें इस हेतु लड़ती रहीं। इतना ही नहीं रूस की क्रांति के बाद प्रथम समाजवादी देश में सामाजिक सुरक्षा के लिए पीपल्स कोमिसार (कमिश्नर) का पद संभाला एवं माता व बालक की संपूर्ण सुरक्षा स्वास्थ्य सेवा एवं वृद्धावस्था में पेन्शन दिलाने के लिए

कानून बनाकर अमल करवाया। वे मानती थीं कि परिवार व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि जो स्त्रियों की आर्थिक परतंत्रता पर निर्भर न हो। किसी भी स्त्री-पुरुष को पैसे की वजह से साथ रहने की जरूरत नहीं पड़नी चाहिए। संबंध केवल और केवल प्रेम एवं परस्पर आदर पर आधारित हो तभी स्त्री सभी तरह से समान नागरिक बन सकती है। ऐसी व्यवस्था तैयार करने के लिए उन्होंने क्रांति के बाद सोवियत रूस में अनेक व्यवहार्य कदम उठाने के प्रयास किए।

वे दुनिया की पहली स्त्री राजदूत बनी एवं रूस के राजनेता के रूप में विदेश मंत्रालय में २५ वर्षों तक सेवाएं दीं। इस दौरान वे नॉर्वे, मैक्सिको, स्वीडन में राजदूत के रूप में रहीं एवं उन्होंने संयुक्त राष्ट्र संघ की पूर्व संस्था राष्ट्र संघ में रूस का प्रतिनिधित्व भी किया।

जब स्टालिन ने लोकतंत्र का गला दबा दिया तब उन्हें राजनैतिक रूप से हांशिए पर धकेल दिया गया। विदेश मंत्रालय में राजदूत के रूप में रखकर यह आयोजन किया गया कि अधिकांशतया वे देश से बाहर रहें व देश की राजनीति में दखल न दें।

आशा: सच में हमें लगता था कि विदेश की, पश्चिमी देशों की, स्त्रियां कितनी अधिक स्वतंत्र हैं लेकिन इंग्लैंड, फ्रांस, अमेरिका और रूस की स्त्रियों के संघर्ष की बातें जानकर ऐसा लगता है कि संघर्ष के बिना कुछ नहीं मिलता।

शकरी: महिला दिवस का इतिहास मेहनत-मजदूरी करने वाली स्त्रियों का इतिहास है, इस बात से तो मेरा काफी उत्साह बढ़ा है। मुझे लगता है कि हमें भी रूस की स्त्रियों की तरह क्रांति करनी चाहिए।

कमला: शकरी बहन ये बात सुन के मुझे फैज़ अहमद फैज़ का वो गाना याद आ गया... "हम मेहनतकश जगवालों से..."

हम मेहनतकश जग वालों से...

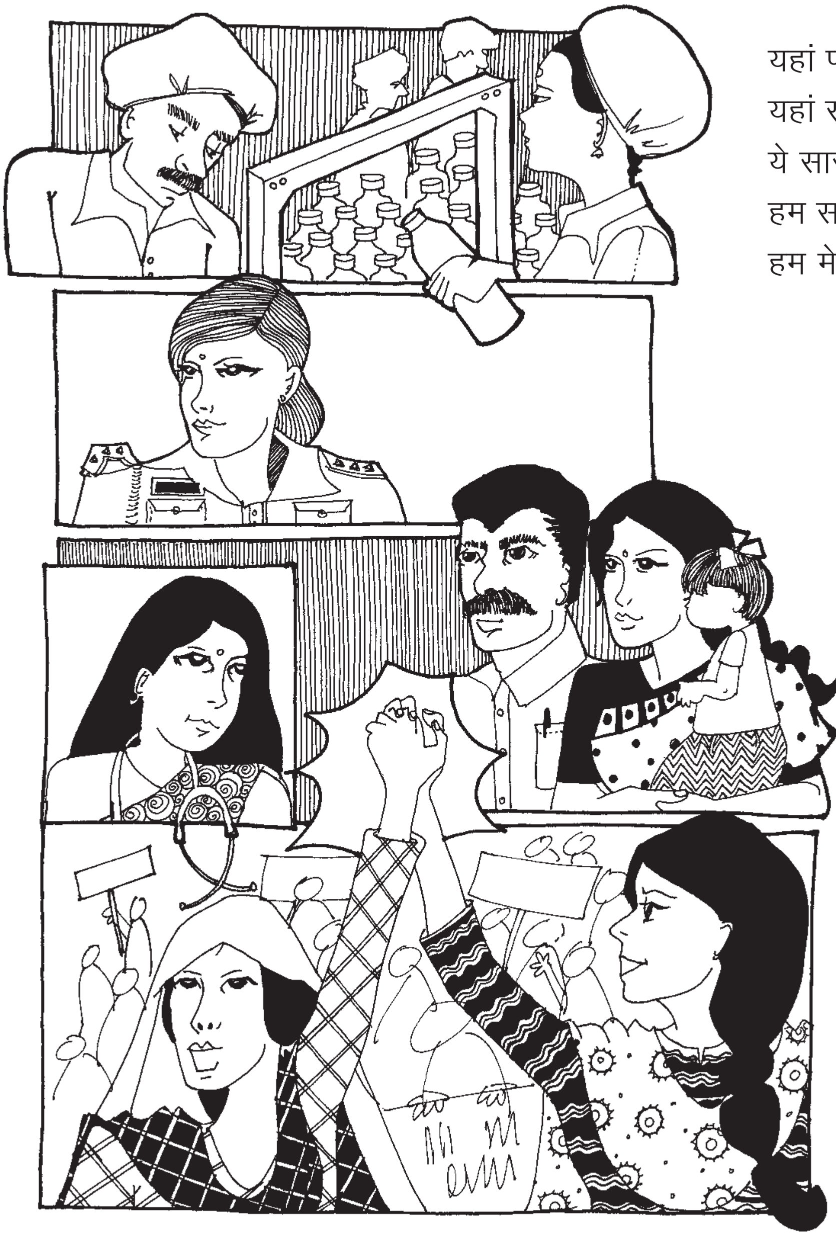

हम मेहनतकश जग वालों से
जब अपना हिस्सा मांगेंगे
इक खेत नहीं एक देश नहीं
हम सारी दुनियां मांगेंगे
हम मेहनतकश जग वालों से...

यहां पर्वत-पर्वत हीरे है
यहां सागर-सागर मोती है
ये सारा माल हमारा है
हम सारा खज़ाना मांगेंगे
हम मेहनतकश जग वालों से...

जो खून बहा जो बाग उजड़े
जो गीत दिलों में कत्ल हुए
हर कतरे का हर गूंचे का
हर गीत का बदला मांगेंगे
हम मेहनतकश जग वालों से...

ये सेठ व्यापारी, रजवाड़े
दस लाख, तो हम हों दस करोड़
कब तक ये अमरीका से
जीने का सहारा मांगेंगे
हम मेहनतकश जग वालों से...

जब तक सीधी हो जाएगी
जब सब झगड़े मिट जाएंगे
हम हर इक देश के झंडे पर
एक लाल सितारा मांगेंगे
हम मेहनतकश जग वालों से...

- फ़ैज़ अहमद फ़ैज़

एकता: कमला, ये गाना गाके सही में दुनिया बदलने का जोश आ गया लेकिन हमारे महिला दिवस का इतिहास तो अभी अधूरा है। उसकी बात हम कल पूरी करेंगे।

हमारा इतिहासः हमारे संघर्ष

एकता: हमने अभी तक देखा कि महिला दिवस के इतिहास में स्त्रियों के लिए मताधिकार की लड़ाई से शुरू करके काम की परिस्थिति सुधारने की लड़ाई, विश्व शांति के लिए युद्ध विरोधी लड़ाई, पूंजीवादी शोषण के विरुद्ध क्रांति जैसे अनेक मुद्दों पर लड़ाइयां शामिल हैं।

१९१० के उस ऐतिहासिक दिन से आज तक, यह दिन नारी मुक्ति आंदोलन के अलग-अलग चरणों के दौरान अलग-अलग देश की स्त्रियों के अनेक ऐतिहासिक संघर्षों की याद ताज़ा कराता है। इसमें विदेशी शासन के खिलाफ राष्ट्रीय आजादी का संघर्ष, स्वयं के शरीर पर स्वयं के अधिकार की लड़ाइयां, स्त्रियों पर हिंसा के विरुद्ध सलामती एवं सुरक्षा के लिए लड़ाइयां, स्त्रियों के अधिकारों को मानव अधिकार के रूप में स्वीकारने की लड़ाइयां, धर्मांधता एवं रूढ़िवाद के विरुद्ध संघर्ष समाज के पिछड़े समूहों एवं प्रकृति को हांसिए पर धकेलने वाली आर्थिक नीतियों के विरुद्ध संघर्ष जैसे विशाल फलकों पर विस्तारित अनेक संघर्ष शामिल हैं।

इस दिन हुई कई महत्वपूर्ण घटनाओं की सूची को एक बार देखें।

१८५७ अमेरिका की कपड़े-सूत की मिलों में महिला मजदूरों ने काम के घंटे कम करने के लिए एवं काम की परिस्थिति सुधारने के लिए संघर्ष किया।

१९१० क्लेरा जेटकीन ने ८ मार्च को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में घोषित किया।

१९१७ रूस में पेट्रोग्रार्ड की महिला मजदूरों ने रोटी, शांति एवं जमीन के लिए हड़ताल करके आंदोलन की शुरूआत की। इस चिंगारी से रूस की क्रांति की मशाल जला कर फिर क्रांति की शुरूआत हुई।

१९३७ स्पेन की स्त्रियों ने फ्रांस के दमनकारी शासन तंत्र के विरुद्ध मोर्चा निकाला।

१९४३ इटली की स्त्रियों ने चर्च, किचन (रसोईघर) एवं किंडरगार्टन (बाल मंदिर) में स्त्रियों को बांधकर रखने वाले मुसोलिनी के फासीवाद का विरोध किया।

१९४६ संयुक्त राष्ट्र संघ (यूएनओ) में मानव अधिकारों के आयोग के अंतर्गत स्त्रियों की समस्याओं पर ध्यान देने के लिए उप आयोग की मांग स्वीकार की गई एवं स्त्रियों के स्थान के लिए स्थापित कमिशन (स्टेटस ऑफ विमेन्स कमिशन) की पहली बैठक हुई।

१९४८ यूएनओ की महासभा में मानव अधिकारों की घोषणा स्वीकार की गई। इसके आधार पर विश्व भर में मानव अधिकारों के लिए संघर्ष अधिक मजबूत बना।

१९५१ अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आइएलओ) द्वारा स्त्री एवं पुरुष मजदूरों को समान वेतन देने का संकल्प स्वीकार किया गया।

१९५२ राजनीति में स्त्रियों के अधिकार के कानून को यूएनओ द्वारा स्वीकार किया गया।

१९६० २५ नवम्बर को डोमिनिकन रिपब्लिक में तानाशाह के सामने सिर उठाने वाले, राजनैतिक कार्यकर्ता मीरावल बहनों की क्रूर हत्या की गई। १९८१ से इस दिन को स्त्री विरोधी हिंसा के विरुद्ध संघर्ष के रूप में मनाया जाता है।

१९६१ लेटिन अमरीकी देश पेरूग्वे में स्त्रियों को मताधिकार मिला एवं लेटिन अमरीकी बहनों की मताधिकार की लड़ाई का सफल अंत हुआ।

१९६७ ईरान में परिवार रक्षक कानून (फेमिलि प्रोटेक्शन लॉ) के अंतर्गत स्त्रियों को पतियों की अनुमति के बिना नौकरी करने की आजादी नहीं थी। यह बंदिश दूर की गई।

१९७० रात्रि पर स्त्रियों का अधिकार स्थापित करने वाली (टेक बैक द नाइट) लड़ाई की शुरूआत हुई। रास्तों पर स्त्रियों एवं लड़कियों की सुरक्षा की लड़ाई दुनिया के अनेक देशों में फैली है।

१९७४ वियतनाम की स्त्रियों ने अमरीकी साम्राज्यवादी आक्रमण के विरुद्ध आंदोलन चलाया।

१९७५ संयुक्त राष्ट्र संघ (यूएनओ)ने मैक्सिको सम्मेलन में अंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष की घोषणा की एवं दुनिया भर की स्त्रियों ने महिला वर्ष को मनाने के दौरान अनेक कार्यक्रम किए। इसके बाद समानता, विकास एवं शांति के नारे के साथ १९७५ से १९८५ के दौरान महिला दशक मनाने का निर्णय लिया गया। मैक्सिको में सरकारी परिषद के अलावा स्वैच्छिक नारी संगठनों द्वारा समांतर गैर-सरकारी परिषद आयोजित की गई जिसमें दुनिया भर की ६०० स्त्रियों ने भाग लिया।

१९७९ यूएनओ में सीडा (कन्वेन्शन आन एलिमिनेशन ऑफ ऑल फोर्म्स ऑफ डिसक्रिमिनेशन अगेन्स्ट वीमेन)-स्त्रियों के संपूर्ण विकास एवं प्रगति के लिए स्त्रियों की बदलाव लाने की भूमिका पर आधारित सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रणालियों को बदल कर जीवन के सभी क्षेत्रों में स्त्रियों के समान अधिकार का कानून स्वीकार किया गया।

१९७९ ईरान में ५०,००० से अधिक स्त्रियाँ चादर (बुरका) के विरुद्ध विरोध करने के लिए रास्ते पर आईं।

१९८० महिला दशक के लिए तय लक्ष्यों की प्रगति का मूल्यांकन करने के लिए मध्य दशक की परिषद कोपेन हेगन में आयोजित की गई। इसमें दशक के लिए तय सूत्र में समानता, विकास एवं शांति के साथ शिक्षा, काम एवं स्वास्थ्य के लक्ष्यों को शामिल किया गया।

१९८० भारत में मथुरा बलात्कार केस के संदर्भ में राष्ट्रव्यापी बलात्कार विरोधी आंदोलन शुरू हुआ। परिणाम स्वरूप सरकार को बलात्कार संबंधी कानून में स्त्रियों के पक्ष में कई सुधार करने पड़े।

१९८१ यूरोप की स्त्रियों ने स्वतंत्र, सुरक्षित एवं कानूनी गर्भपात की लड़ाई को तीव्र बनाया।

१९८३ स्त्रियों की यौन गुलामी के विरुद्ध अंतरराष्ट्रीय समन्वय द्वारा नीदरलैंड में आयोजित परिषद में वेश्या बनाने तथा सभी प्रकार के यौन गुलामी के विरुद्ध आवाज उठाई गई।

१९८५ १९७५ से १९८५ के दौरान मनाए गए अंतरराष्ट्रीय महिला दशक का निचोड़ निकालने के लिए नैरोबी में अंतरराष्ट्रीय परिषद आयोजित की गई जिसमें सन २००० तक स्त्रियों की प्रगति के लिए आगामी रणनीतियां (फोरवर्ड लुकिंग स्ट्रेटजीज) तय की गई।

१९८९ कनाडा में, इंजीनियरिंग कालेज की १४ छात्राओं की, 'वे नारीवादी हैं' कहकर एक पुरुष ने हत्या कर दी। इस घटना से कनाडा के समाज में स्त्री विरोधी मूल्य जितने गहरे हैं उनकी चर्चा शुरू हुई।

१९९० इस वर्ष को सार्क (दक्षिण एशियाई देशों का समूह) के देशों के लिए बालिका वर्ष घोषित किया गया। इन देशों में प्रवर्तित पुत्र लालसा (सन प्रेफरन्स) एवं स्त्री तिरस्कार (विमेन हेट) को ध्यान में रखकर अनेक संघर्ष किए गए। भारत में कई शहरों में गर्भ लिंग परीक्षण के विरुद्ध आंदोलन, जागृति कार्यक्रम किए गए।

१९९१ भारत में कालीकट में आयोजित स्वायत्त स्त्री संगठनों के राष्ट्रीय सम्मेलन में बढ़ती जा रही धर्मांधता को चुनौति देने के लिए १९९१ के वर्ष को धर्मांधता विरोधी वर्ष के रूप में घोषित किया गया। इस वर्ष के दौरान देश के कोने-कोने में स्त्री संगठनों ने धर्मांधता विरोधी कार्यक्रम किए।

१९९१ वीमेन्स ग्लोबल लीडरशिप इन्स्टीट्यूट द्वारा स्त्रियों पर हिंसा विरोधी सक्रियता के १६ दिवस का अभियान शुरू किया गया।

१९९१ बोस्निया एवं हरजीगोविना में जारी वंशीय युद्ध में बलात्कार का उपयोग एक हथियार के रूप में किया जाता है इस पर ध्यान दिया गया।

१९९३ संयुक्त राष्ट्र अंतरराष्ट्रीय मानव अधिकार सम्मेलन वियेना में आयोजित किया गया जिसमें दुनिया भर के स्त्री संगठनों ने पांच लाख हस्ताक्षर करवाकर भेजे। इस संघर्ष के कारण ही घोषणा पत्र के कुल १३९ पैरा में से १३ पैरा खास स्त्रियों एवं लड़कियों के मानव अधिकारों से संबंधित थे। दिसम्बर १९९३ में संयुक्त राष्ट्र की महासभा ने स्त्री विरोधी हिंसा से संबंधित घोषणा पत्र को स्वीकार किया।

१९९४ स्त्रियों एवं लड़कियों के अधिकार, अंतरराष्ट्रीय मानव अधिकारों का अनिवार्य, आंतरिक एवं अलग नहीं किया जा सकने वाला भाग है, इस बात को आगे ले जाने के लिए कई देशों की स्त्रियों ने अभियान चलाया।

१९९५ चीन में बीजिंग में चौथी विश्व महिला परिषद आयोजित की गई। इसमें सरकारी कार्यक्रम के समांतर आयोजित गैर-सरकारी संगठनों की परिषद में करीब ३०,००० स्त्रियों ने भाग लिया था।

१९९८ अंतरराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय स्थापित करने के लिए आयोजित राजनैतिक परिषद में युद्ध के दौरान होने वाले बलात्कार, यौन गुलामी, वेश्या व्यवसाय के लिए दबाव डालना, जबरदस्ती गर्भवती बनाना, जबरदस्ती परिवार नियोजन ऑपरेशन करना एवं यौन हिंसा करना आदि को युद्ध अपराध एवं मानवता विरोधी अपराध की धाराओं के रूप में पहली बार स्वीकार किया गया।

२००० संयुक्त राष्ट्र संघ की खास सभा के रूप में बीजिंग प्लस ५ का खास सत्र बुलाया गया। जिसमें अभी तक के कदमों की समीक्षा एवं आगामी रणनीतियां तय की गईं।

यूएनओ की सुरक्षा परिषद में संकल्प पारित किया गया कि शांति के लिए किसी भी समझौते या शांति करारों में हर स्तर पर स्त्रियों एवं लड़कियों की खास जरूरतों का ध्यान रखा जाए।

अनेक वर्षों के संघर्ष के बाद टोकियो में आयोजित अंतरराष्ट्रीय महिलाओं के युद्ध अपराध न्यायालय में दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान सेना के जवानों की यौन संतुष्टि के लिए स्त्रियों की जबरदस्ती की गई भरती को बलात्कार, यौन गुलामी एवं मानवता विरोधी अपराध के बदले जापान के राजा हिरोहितो एवं जापान की सरकार को दोषी घोषित किया गया।

कमलाः वास्तव में, यह दिवस स्त्रियों की सामूहिक ताकत एवं दुनिया के प्रत्येक देश में, समाज परिवर्तन में स्त्रियों के योगदान के इतिहास का प्रतीक है।

आशाः महत्वपूर्ण बात यह है कि यह इतिहास बनाने वाली स्त्रियां कोई साम्राज्य की महारानी या साधन संपन्न स्त्रियां नहीं थी परंतु हमारे में से ही, हमारी जैसी एवं अपने आस-पास रहने वाली, अपने व अपने बालकों के जीवन को अधिक बेहतर बनाने के लिए मेहनत करने वाली, संघर्ष करने वाली स्त्रिया हैं।

फरजानाः जैसे कि हमारे जैसी ही स्त्रियों द्वारा बनाया हमारा ही इतिहास है।

रेशमाः जो हमें संघर्ष जारी रखने की प्रेरणा एवं ताकत देता है।

शकरीः एकता बहन, महिला दिवस के इतिहास में आपने अलग-अलग संघर्षों के बारे में ये दो-चार लाइनों की सूची बताई इससे हमें उसके बारे में ज्यादा समझ में नहीं आया। इन सभी के बारे में विस्तृत रूप से बताएंगी न!

एकताः इसमें से अधिकांश घटनाओं के बारे में बात आगे के खंडों में करने वाले हैं।

कमलाः मुझे तो इस खंड में स्त्री जनता में से नागरिक जिस तरह बनी वह बात बहुत ही रसप्रद लगी।

नीरूः परंतु यह तो हमने विदेश की स्त्रियों की बात की। अब हम यह बात करेंगे कि हमारे देश की स्त्रियां किस तरह नागरिक बनी?

एकताः हां अब अगले भाग में जानेंगे कि १९वीं सदी में समाज सुधार एवं आजादी की लड़ाई में भारत की स्त्रियां किस तरह सहभागी बनी थीं।

फरजानाः सही में विदेश की औरतें और नारीवादी विचारों के बारे में सुनी-सुनाई कितनी बातें अफवाह है उसका आज पता चला।

शकरीः और नारीवादी मतलब पुरुषों की विरोधी यह बात कितनी गलत है वो आज बिलकुल समझ में आ गया।

आशाः अब मैं अपने पति को ही नही बल्कि तमाम विरोधियों को समझा सकूंगी कि नारीवादी औरतों ने पूरे समाज के गरीबों और मजदूरों के लिए कितना संघर्ष किया है।

एकताः तो फिर चर्चा के इस भाग की समाप्ति हम नारीवाद के बारे में लिखे गये गाने से करेंगे।

आया नारीवाद आया

आया नारीवाद आया, छाया नारीवाद छाया
एकता लाने के लिए धूम मचाने के लिए

नारीवादी वैस्टर्न नारीवादी अर्बन
ऐसी अफ़वाहें लोग फैलाते रहे
हम मर्दों की दुश्मन, हम धर्मों की दुश्मन
हमें मर्दाना औरत बताते रहे
अब न तानों से डरें, अब न घुट-घुट के मरें, एकता लाने...

मुलाकात न की हमसे बात न की
हमसे बिना समझे ही हैं शिकवे किये
हमको बुर्जुआ कहा ऐन्टी-लैफ़्ट कहा
ऐसे कितने ही हमको हैं फ़तवे दिये
अगली पीढ़ी के लिए कड़वे ये घूँट पिये, एकता लाने...

आओ देखें ज़रा नारीवाद है क्या
इतना हल्ला और इतना फ़साद है क्या
हमारी माँग है एक बड़ी सीधी और नेक
जुल्मों बन्दिशों से होना चाहें रिहा
सोच के देखो ज़रा इस में क्या कुछ है बुरा, एकता लाने...

नारीवादी चाहें, औरतें मुक्ति पायें
हक़ बराबर के हों, पूरा सम्मान हो
औरत आज़ाद हो, न वो बरबाद हो
नारी होने का, उसको भी अभिमान हो
आओ ये नारा लगे, नारीवाद प्यारा लगे

- कमला भसीन

("रमैया वस्ता वैया" की धुन पर आधारित)

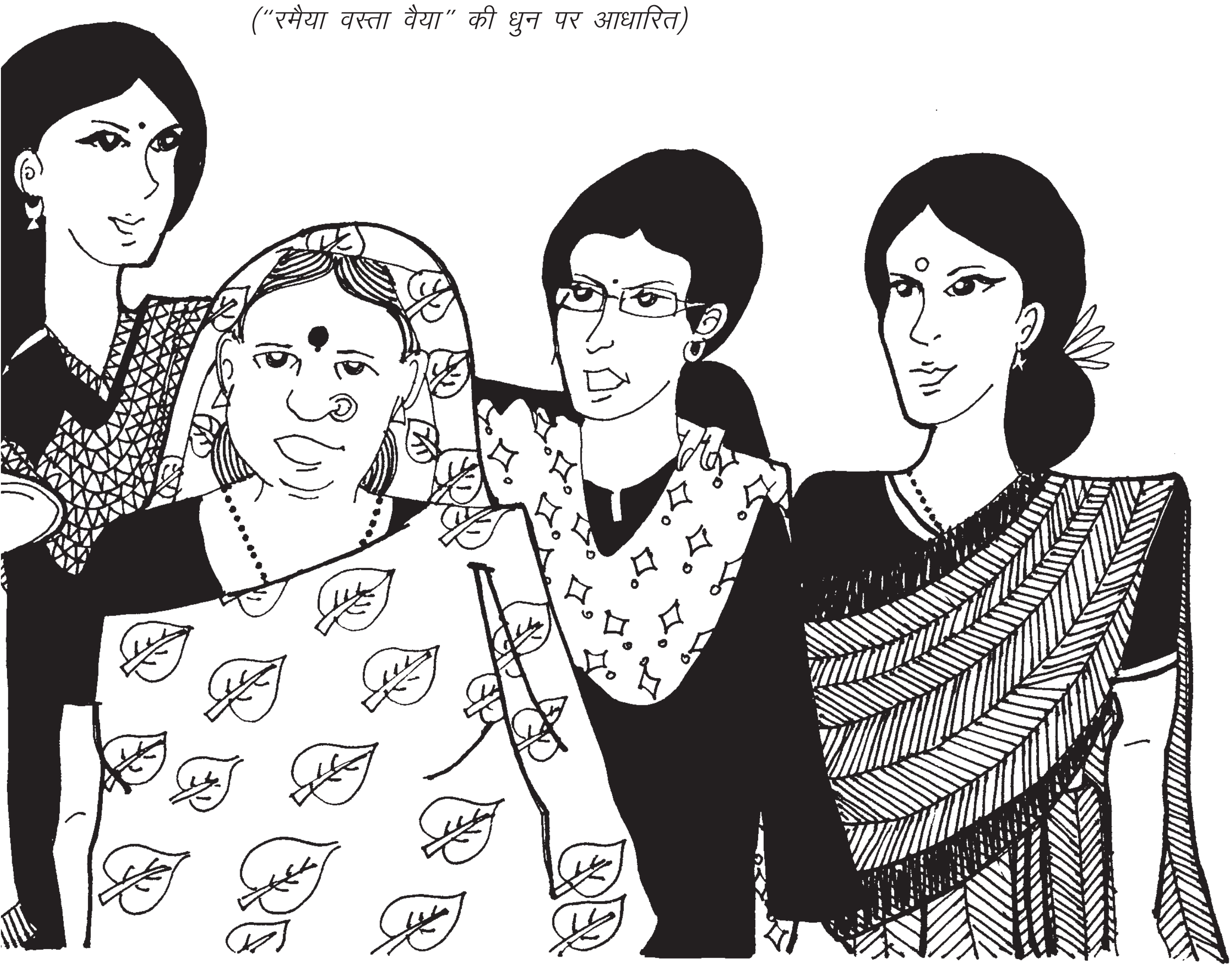

संदर्भ सामग्री की सूची

१. बेटा क्या है? बेटी क्या है? लेखिका कमला भसीन, प्रकाशकः जागोरी, नई दिल्ली।

२. पितृसत्ता क्या है? लेखिका कमला भसीन, प्रकाशकः जागोरी, नई दिल्ली।

३. अन्डरस्टेन्डिंग जेन्डर, कमला भसीन, विमेन अनलिमिटेड, नई दिल्ली।

४. पश्चिम में नारी आंदोलनः उदय, संदर्भ और मुद्दे, अनुपा राय का लेख, साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जीनी लोकनीता संपादित पुस्तक, "नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुद्दे" प्र. दिल्ली विश्व विद्यालय

५. समाजवादी देशों में महिला आंदोलन, श्रीमती चक्रवर्ती का लेख, साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जीनी लोकनीता संपादित पुस्तक, "नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुद्दे" प्र. दिल्ली विश्व विद्यालय

६. जगतना इतिहासनुं रेखादर्शन, जवाहरलाल नहेरु, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद

७. मेन्स वर्ल्डली गुड्स, द स्टोरी ऑफ वेल्थ ऑफ नेशन बाइ लीओ हुबरमेन, पीपल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

८. फेसेट्स ऑफ इमेन्सीपेशनः विमेन इन मूवमेन्ट फ्रोम द एटीन्थ सेच्युरी टु द प्रेजन्ट, शिला रोबोथम, इन विमेन रेसीस्ट ग्लोबलाईजेशन, शिला रोबोथम और स्टीफनी लींकोग्ले, जेड बुक्स

९. द हिस्ट्री ऑफ रशियन रिवोल्युशन, लियो ट्रीटस्की

१०. एलेक्जान्ड्रा कोलोन्ताई, प्रोग्रेस पब्लिशर, मास्को

इन्टरनेट से लिए कुछ संदर्भ

११. सनशाईन फोर विमेन एट www.pinn/~sunshine/main.html

१२. द डवलपमेन्ट ऑफ विमेन्स मूवमेन्ट्स, १७८९-१९१४

www.gla.ac.uk/centres/tltphistory/training/.../coredoc1.htm

१३. wikipedia free encyclopaedia & en.wikipedia.org/wiki/Feminism

१४. ए हिस्ट्री ऑफ इन्टरनेशनल विमेन्स डे इन वर्ड्स एन्ड इमेजीस, जोयस सेटीवन्स, www.isis.aust.com/iwd/stevens/

सहियर (स्त्री संगठन) १९८४ से स्वायत्त महिला संगठन के रूप में कार्यरत है। 'सहियर' का उद्देश्य ऐसे समाज़ की रचना करना है जिसमें किसी भी तरह के शोषण, दमन, अन्याय या अत्याचार के लिए स्थान न हो एवं जिसमें नारी को मनुष्य के रूप में सामाजिक दर्जा प्राप्त हो।''

"नारी मुक्ति के बिना मानव मुक्ति संभव नहीं है एवं मानव मुक्ति के बिना नारी मुक्ति असंभव है" की समझ के साथ यह महिलाओं के अधिकारों एवं मानव अधिकारों के संघर्ष को आगे ले जाने के लिए विभिन्न गतिविधियां करता है।

- नुक्कड़ नाटकों, जागृति गीतों एवं गरबा शिविरों, निबंध लेखन, सार्वजनिक प्रदर्शन आदि जैसे जागृति कार्यक्रमों के द्वारा समाज के बृहद समुदाय के महिलाओं के प्रति पुरुष प्रधान दृष्टिकोण को बदलने का प्रयत्न करता है एवं उस समझ को समाज तक ले जाने के लिए संशोधन, प्रकाशन, पुस्तकालय जैसी गतिविधियां करता है।
- महिलाओं पर होने वाली हिंसा एवं महिलाओं को प्रभावित करने वाले अन्य कानूनों में सुधार लाने के लिए तथा मौजूदा कानूनों को क्रियान्वित कराने का अभियान जारी है।
- संप्रदायवाद, जातिवाद एवं सीमांत समूहों के मानवाधिकार हनन की घटनाओं में मानवाधिकार संगठनों के साथ मिलकर कार्य करता है।
- परिवार, समाज एवं कार्य स्थल पर, हिंसा, अन्याय का सामना करने वाली महिलाओं के साथ खड़ा रहकर उनको परामर्श, कानूनी सलाह एवं संवेदनात्मक सहारा देता है।
- किशोरियों के व्यक्तित्व के विकास एवं प्रतिभा को निखारने में सहायक बनता है।
- झोंपड़वासी, श्रमजीवी एवं निम्न मध्यम वर्ग की महिलाओं का मंडल बनाकर बचत, जागृति एवं दैनिक समस्याओं को हल करने के लिए उनको संगठित करता है।
- संवेदनशील क्षेत्रों में सभी समुदायों की सक्रिय महिलाओं को न्याय, शांति एवं कौमी एकता के लिए नेता बनने के लिए प्रशिक्षण देता है।
- स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं, सरकारी अधिकारियों, पुलिस तंत्र, शिक्षकों, वकीलों, ट्रेड युनियन के कार्यकर्ताओं एवं अन्य लोक संगठनों के कार्यकर्ताओं को महिलाओं की समस्याओं से परिचित कराने एवं उनमें महिलाभिमुख संवेदनशीलता लाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करता है। अन्य संस्थाओं द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में विशेषज्ञ (रिसोर्स पर्सन) के रूप में कार्य करता है।

उन्नति - विकास शिक्षण संगठन एक अलाभकारी व गैर-सरकारी संगठन है, जो सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, १८६० के अंतर्गत १९९० से पंजीकृत है। संगठन का उद्देश्य है सामाजिक समावेश व लोकतांत्रिक अभिशासन को प्रोत्साहित करना ताकि समाज के कमज़ोर वर्गों को सशक्त बनाया जाए जिससे वे विकास की मुख्य धारा व निर्णय प्रक्रियाओं में प्रभावी और निर्णयात्मक रूप से भागीदारी निभा सकें।

संगठन पश्चिमी भारत के नागरिक समूहों, स्वैच्छिक संस्थाओं, स्थानीय अभिशासन के जन प्रतिनिधियों और सरकार के साथ मिलकर मुद्दा आधारित व नीतिगत शैक्षणिक सहयोग प्रदान करने की दिशा में कार्यरत है। सहभागी शोध, लोकशिक्षण, पैरवी, क्षेत्र स्तरीय संघटन व बहुहिताधिकारियों के साथ क्रियान्वयन करना संगठन की मुख्य कार्य पद्धतियाँ हैं। नागरिकों के मूलभूत अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए हम स्थानीय स्तर से लेकर नीतिगत बदलाव हेतु वातावरण बनाने का प्रयास करते हैं जिसमें हमें कमज़ोर लोगों के संघर्ष से प्रेरणा व हमारे सहयोगियों से शक्ति मिलती है। वर्तमान में सभी गतिविधियाँ निम्नांकित कार्यक्रम केन्द्रों द्वारा आयोजित की जाती हैं:

१. सामाजिक समावेश व सशक्तिकरण
२. नागरिक नेतृत्व व अभिशासन
३. आपदा जोखिम घटाने के सामाजिक निर्धारक

क्षेत्रीय अनुभवों से प्राप्त सीख को समेकित कर उसे प्रकाशित किया जाता है तथा ज्ञान संसाधन केन्द्र के द्वारा विस्तृत रूप से उसका आदान-प्रदान किया जाता है। हमारा प्रयास है कि सामुदायिक नेतृत्व, खासकर दलितों व महिलाओं के लिए अकादमी बनाएं ताकि वे स्थानीय मुद्दों को प्रभावी रूप से उठा सकें।

नारी आंदोलन का इतिहास

भाग - १
स्त्री जीवन संघर्षः प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक

भाग - २
स्त्री समानता और मताधिकारः विश्व में नारी आंदोलन

भाग - ३
सामाजिक सुधार तथा स्वतंत्रता आंदोलन में स्त्रियां

भाग - ४
नारी मुक्ति आंदोलनः समस्याएं और चुनौतियाँ

उन्नति

उन्नति

विकास शिक्षण संगठन
जी-१/२००, आज़ाद सोसायटी, आंबावाड़ी
अहमदाबाद-३८००१५
फोनः ०७९-२६७४६१४५, २६७३३२९६
ई-मेलः sie@unnati.org
वेबसाईटः www.unnati.org

sahiyar

सहियर (स्त्री संगठन)
जी-३, शिवांजली फ्लैट्स,
जाधव अमीश्रद्धा सोसायटी के पास
नवजीवन, आजवा रोड़, वड़ोदरा-३९० ०१९
फोनः ०२६५-२५१३४८२
ई-मेलः sahiyar@gmail.com